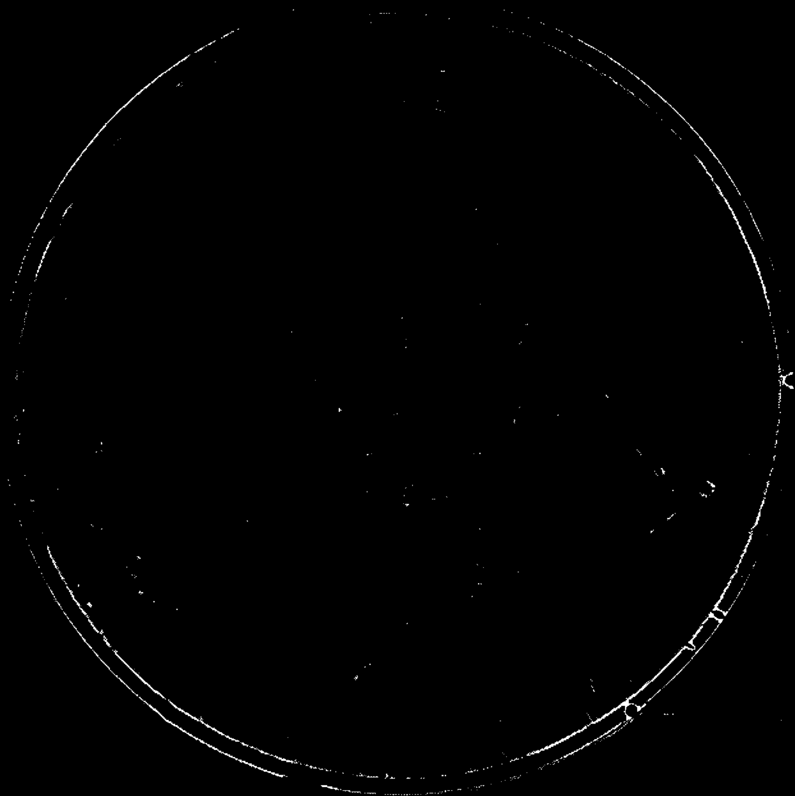

आत्मविश्वास : एक मौन प्रेरणा

कठिनाइयां प्रगति के कपाट खोल देती हैं। मार्ग में आने वाली बाधाओं से व्यक्ति नए अनुभवों का सृजन करता है। उनसे जूझने के बाद वह अधिक योग्य व कार्यक्षम बन जाता है। सोने को कुन्दन बनने के लिए आग में तपना पड़ता है। कांटों पर खिलने के बाद ही गुलाब दूसरों को मुस्कान देने में समर्थ होता है। इस क्रम में बाधाएं विकास-प्रक्रिया का अनिवार्य अंग प्रतीत होती हैं।

असफलता प्रगति के मार्ग में बाधक नहीं बनती यदि साहस और संकल्प का आवश्यक सन्तुलन बना रहे। असफलता को एक आकस्मिकता के रूप में स्वीकार करके उत्साहपूर्वक कार्य करना सफलता के मार्ग में सहायक बनता है। फिर संघर्ष की अनवरत प्रक्रिया व्यक्ति में अदम्य साहस, आत्म-विश्वास व सामर्थ्य का निर्माण करती है। संसार के अनेक विकलांग व्यक्तियों के ऐसे भी उदाहरण हैं जो उन्नति की चरम ऊंचाइयों पर पहुंचे- अमेरिका के राष्ट्रपति रूजवेल्ट, महाकवि सूरदास, स्वामी विरजानन्द, अंग्रेजी कवि मिल्टन, यूनानी कवि होम, पंडित अष्टावक्र आदि ऐसे ही व्यक्ति थे। कर्मशील के शब्द कोष में अन्धकार, भय, निराशा, असम्भव जैसे शब्दों को कोई स्थान नहीं रहता।

नैसर्गिक और मानवीय सभी चुनौतियों को स्वीकारते हुए विकलांग व्यक्ति जब स्पर्धा में स्वस्थ व्यक्तियों को भी पीछे छोड़ देता है तो उसकी सफलता पर हर व्यक्ति को एक बार मधुर ईर्ष्या अवश्य होती है। उसकी यह सफलता अन्य विकलांग व्यक्तियों को ही नहीं बल्कि सभी को किसी न किसी रूप में प्रेरणा प्रदान करती है। हाथ-पैरों से विकलांग छात्र का परीक्षा में प्रथम स्थान प्राप्त करना निःसन्देह अन्य छात्रों के लिए अनुकरणीय है। नेत्रहीन द्वारा किया जाने वाला सूक्ष्म तकनीकी काम स्वस्थ व्यक्ति की आंखें खोल देता है। श्रमजीवी अपंग व्यक्ति का संघर्षमय जीवन प्रत्येक के लिए एक प्रेरणादायी संदेश देता है।

"जहां चाह वहां राह" के सन्देश को अंगहीन व्यक्ति भी अपने दृढ़ विश्वास और अथक परिश्रम के द्वारा सत्य सिद्ध कर दिखाते हैं। निष्ठावान कर्मशील विकलांग व्यक्ति को विकलांग कहने में क्षुद्रता का बोध होता है। सभी अंगों से परिपूर्ण किन्तु दूसरों पर आश्रित व्यक्ति ही वास्तव में विकलांग हैं। काम चोरी की प्रवृत्ति स्वस्थ व्यक्ति को भी विकलांग बना देती है। हाथ-पैर होते हुए भी वह दूसरे पर निर्भर रहता है।

विकलांग व्यक्ति द्वारा वह सब कर दिखाना चमत्कारिक ही है जो सामान्यतः एक स्वस्थ व्यक्ति के लिए भी करना अत्यन्त कठिन हो। जाड़ों के दिनों में भी एक हाथ से शून्य रिक्शाचालक के माथे पर अथक परिश्रम के कारण झलकता पसीना और उस पसीने में भी चेहरे पर उभरा हुआ स्फूर्ति-भाव कार्य के प्रति उसके समर्पण का ही प्रतीक है। रिक्शे के पहियों की गति के साथ दौड़ता उसका उत्साह-भाव मन को छू जाता है। परिस्थितियां व्यक्ति को मजबूर बना देती हैं जिनका सामना करने के लिए उसे पूरी साधना करनी पड़ती है। ऐसे में कायर व्यक्ति आत्महन्ता बन कठिनाई से छुटकारा पाने के लिए जीवन का अन्त कर देता है। किन्तु वह विकलांग जो अपने कठिन परिश्रम से जीविका का पालन करता है, निश्चय ही सबके लिए प्रेरणा का एक स्रोत है। मैं स्वयं को उसके आगे सब दृष्टियों से बौना अनुभव करता हूं। तन अपंग है तो क्या हुआ मन तो संकल्प से पूर्ण है जो जीवन जीने को नई दिशा खोज लेता है। इसी कारण आज विकलांग व्यक्ति सभी क्षेत्रों में सहज रूप से कार्य करते दिखाई देते हैं जो एक आदर्श प्रस्तुत करके कठिनाइयों को सहर्ष स्वीकार करने की प्रेरणा देते हैं।

विकलांग व्यक्ति में अवशेष शक्तियों के अधिकतम उपभोग की ललक उसको कर्म की उपासना करना सिखा देती है। तब वह अपने सतत् प्रयास के कारण शारीरिक अपंगता को भूल सा जाता है। अदम्य साहस के साथ कठिनाइयों से संघर्ष करते हुए जीवन के हर आघात-प्रतिघात को अंगीकार करने वाला अपंग व्यक्ति निःसंदेह उन सभी व्यक्तियों को रोशनी देता है जो स्वयं अपनी जिन्दगी अंधकारमय किए बैठे हैं। बैसाखी के सहारे कर्म की उपासना करने वाला विकलांग मात्र सैद्धान्तिक प्रेरणा नहीं देता बल्कि व्यवहार द्वारा मौन संकेत से ही कर्म के प्रति सचेत कर देता है।

प्रकृति प्रदत्त होने के कारण क्षमता तो सबको प्राप्त है। किन्तु जो उसका उपयोग नहीं करता उसकी शक्ति कुण्ठित हो जाती है। धारदार यन्त्र का प्रयोग नहीं होगा तो निश्चय ही जंग लगकर उपयोगिता शून्य हो जाएगी। संघर्ष भरे जीवन में अपने धैर्य, साहस, निष्ठा और आत्मविश्वास के बल पर असम्भव को सम्भव बना देने वाला प्रत्येक विकलांग जामवन्त बन कर कर्म की भाषा से हर हनुमान की सोई हुई प्रेरणा को जाग्रत करता है।

राकेश कुमार अग्रवाल

मज़दूर मंज़िल

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, एकांकी, कविता, संस्मरण, हास्य-व्यंग्य चित्र आदि भेजिए।

●

अस्वीकृत रचनाओं की वापसी के लिए टिकट लगा व पता लिखा लिफाफा साथ आना आवश्यक है।

●

'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने, पता बदलने या अंक न मिलने की शिकायत बिजनेस मैनेजर, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 से कीजिए।

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार : सम्पादक कुरुक्षेत्र (हिन्दी), ग्रामीण विकास मन्त्रालय 467, कृषि भवन, नई दिल्ली के पते पर करें।

दूरभाष : 382406

सम्पादक : महेन्द्र पाल सिंह

उपसम्पादक : राधे लाल

आवरण पृष्ठ : कुमारी अलका

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास का प्रमुख मासिक

वर्ष 27 चैत्र–वैशाख 1904 अंक 6

इस अंक में **पृष्ठ संख्या**

हिन्दी के प्रयोग को बढ़ाया जाए 2
राव वीरेन्द्र सिंह

कूड़े-कचरे में ऊर्जा का वास 3
कीर्ति कुमार

हरित क्रांति के द्वितीय चरण की आवश्यकता 5
डा० बद्री बिशाल त्रिपाठी

संशोधित बीस सूत्री कार्यक्रम 10
श्रीमती मनुहरि पाठक

राजस्थान में ग्रामीण-विकास में प्रभावी प्रबन्ध का अभाव 12
आर० के० दीक्षित

व्यावहारिक पुष्टाहार कार्यक्रम की नई दिशाएं 14
बटुकेश्वर दत्त सिंह 'बटुक'

अधिक आमदनी के लिए मुर्गीपालन कैसे करें 16
विनय कुमार भटनागर

गांवों के युवकों को स्वरोजगार के लिए प्रशिक्षण 18

ग्रामाञ्चल में निर्बल का सम्बल 19

ग्रामीण जनता को सामाजिक न्याय कैसे मिल सकेगा ? 21
कर्ण सिंह गौतम

भारत में अफीम की खेती––एक विश्लेषण 22
डा० ओम प्रकाश शर्मा एवं प्रो० मुरारी लाल सिंघल

कृषि उत्पादों के निर्यात की नई नीति 25
सी० वेंकटरमन

राजस्थान में लघु उद्योगों की भूमिका 26
सतीश कुमार जैन

काका की चौपाल में परिवार कल्याण की चर्चा 29
चरन सरन 'नाज़'

गुजरात में ग्राम अंगीकरण कार्यक्रम आवरण पृष्ठ 3
एच० एस० नागराज शर्मा

स्थायी स्तम्भ

केन्द्र के समाचार : कविता आदि।

हिन्दी के प्रयोग को

बढ़ाया जाए

•

राव वीरेन्द्र सिंह का अनुरोध

ग्रामीण विकास मंत्रालय की हिन्दी सलाहकार समिति की पहली बैठक कृषि, ग्रामीण विकास तथा नागरिक पूर्ति मंत्री राव वीरेन्द्र सिंह की अध्यक्षता में 25 फरवरी, 1982 को कृषि भवन में सम्पन्न हुई। बैठक में कृषि तथा ग्रामीण विकास राज्य मंत्री, उपमंत्री तथा 4 संसद सदस्यों सहित 27 सरकारी तथा गैर-सरकारी अधिकारियों ने भाग लिया। उपस्थित सदस्यों का स्वागत करते हुए अध्यक्ष महोदय ने सरकारी कामकाज में हिन्दी के प्रयोग को और अधिक बढ़ाने पर बल दिया। उन्होंने कहा कि अगर आवश्यक और उपयुक्त हो तो हिन्दी को सरल बनाने की दृष्टि से इसमें दूसरी भाषाओं के [illegible] शब्दों का समावेश किया जा सकता है। परन्तु ऐसे शब्दों के प्रयोग में सावधानी बरतनी होगी क्योंकि सारे देश में अनेक भाषाएं बोली जाती हैं और एक जिले तथा दूसरे जिले की भाषा में भी काफी अन्तर आ जाता है। आवश्यकता इस बात की है कि ग्रामीण शब्दों के प्रयोग को बढ़ाने की बजाय सही अभिव्यक्ति वाले सरल शब्दों का प्रयोग बढ़ाया जाए।

मंत्री महोदय ने कहा कि जब हम विदेशी सम्मेलनों में जाते हैं तो वहां अपनी भाषाओं का प्रयोग नहीं करते बल्कि विदेशी भाषा का सहारा लेते हैं जबकि विदेशी अपने देश में तथा विदेश में अपनी ही भाषा का प्रयोग करते हैं। हमें हिन्दी भाषा का स्तर इतना ऊंचा उठाना चाहिए कि हम विदेश में भी अपनी भाषा का प्रयोग सगर्व कर सकें। इसके लिए यह जरूरी है कि हम पहले अपने सरकारी कामकाज में हिन्दी का प्रयोग सुचारू रूप से करें। जो काम हिन्दी में किया जा सकता है, उसके लिए ठोस कदम उठाए जा सकते हैं और मार्गदर्शक सिद्धांत निश्चित किए जा सकते हैं। उन्होंने कहा कि वे इस पक्ष में नहीं हैं कि अंग्रेजी न पढ़ी जाए। अंग्रेजी आज के युग में बहुत जरूरी भाषा है। इसमें वैज्ञानिक तथा तकनीकी सामग्री का विपुल भण्डार है। विकास की दृष्टि से इसका ज्ञान नितांत आवश्यक है।

श्री रघुबीरसिंह शास्त्री, उपकुलपति, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, ने मंत्रालय में किए जा रहे हिन्दी कार्य से संतोष व्यक्त किया और कहा कि अन्य मंत्रालयों की अपेक्षा ग्रामीण विकास मंत्रालय में हिन्दी में अधिक कार्य किया जा रहा है। ग्रामीणों के विकास के लिए यह आवश्यक है कि उनकी ही भाषा में उनके साथ सम्पर्क किया जाए तथा मंत्रालय में भी जनता की भाषा का ही प्रयोग किया जाए। उन्होंने हिन्दी में भेजे जाने वाले पत्रों की संख्या में वृद्धि करने पर बल दिया। मंत्रालय में चलाई जा रही नकद पुरस्कार योजना के पुरस्कारों की राशि काफी कम है; मंत्रालय में हिन्दी में काम करने वाले अधिकारियों/कर्मचारियों में से केवल प्रथम तीन को ही पुरस्कृत किया जाता है। इतने से हिन्दी का प्रयोग बढ़ाने की आशा नहीं की जा सकती।

कुरुक्षेत्र पत्रिका के बारे में श्री शास्त्री ने कहा कि यह अंग्रेजी में पाक्षिक निकलती है और हिन्दी में मासिक। अगर स्थिति इसके विपरीत होती तो उन्हें संतोष होता। इस पत्रिका को तुरन्त पाक्षिक बनाया जाना चाहिए।

उन्होंने कहा कि मंत्रालयों में अनुवाद कार्य इतना बढ़ गया है कि अनुवादकों के पास हिन्दी संबंधी योजनाओं के कार्यान्वयन का समय ही नहीं रहता। अनुवाद तथा कार्यान्वयन के लिए अलग-अलग अनुभागों की व्यवस्था होनी चाहिए।

डा० राजेन्द्र प्रसाद शर्मा ने कहा कि मूल बात हिन्दी में काम करने की झिझक को दूर करना है। अनेक अधिकारी/कर्मचारी हिन्दी में काम करने की पूरी योग्यता रखते हुए भी हिन्दी में काम नहीं करते क्योंकि उनके मन में झिझक होती है कि वे हिन्दी में कार्य करने में सक्षम हैं भी या नहीं।

श्री के० एन० जोशी, संसद सदस्य ने कहा कि हिन्दी न जानने वाले अनेक अधिकारियों/कर्मचारियों को हिन्दी में

प्रशिक्षण दिया जाता है। सरकार को यह देखना चाहिए कि क्या उन लोगों ने परीक्षाएं निर्धारित अवधि में दी हैं और पास की हैं। निर्धारित अवधि में परीक्षाएं पास करना जरूरी होना चाहिए। मंत्रालय में अनुवादकों की संख्या भी बढ़ाई जानी चाहिए।

श्री योगेन्द्र शर्मा, संसद सदस्य ने सुझाव दिया कि मंत्रालय की राजभाषा कार्यान्वयन समिति में भी गैर-सरकारी सदस्यों को शामिल किया जाए। इससे मंत्रालय में हिन्दी संबंधी कार्य की प्रगति का सही जायजा लिया जा सकेगा। मंत्रालय में राजभाषा के प्रयोग की कानूनी वांछनीयता और व्यावहारिकता के बीच की खाई को पाटना आवश्यक है।

श्री दिगम्बर सिंह, संसद सदस्य ने कहा कि जनता में यह आम धारणा बन गई है कि अंग्रेजी के प्रयोग के बिना वे गंवार लगते हैं। लोगों के मन में से इस भावना को निकालना अत्यन्त आवश्यक है। संसद में भी हिन्दी में बोलने वालों की संख्या में लगातार कमी हो रही है। इस स्थिति को सुधारने के लिए अभी से प्रयत्न किए जाने चाहिए।

श्री एम० के० वेलायुधन, नायर, सचिव, केरल हिन्दी प्रचार सभा ने सुझाव दिया कि हिन्दी की परीक्षाएं पास करने वाले दक्षिण भारतीय लोगों को केन्द्रीय सेवाओं में अग्रता दी जानी चाहिए। अध्यक्ष महोदय ने इस सुझाव का स्वागत किया।

केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद के उप-प्रधान श्री पन्ना लाल शर्मा का सुझाव था कि दौरों पर जाने वाले अधिकारियों को हिन्दी संबंधी कार्यों का भी निरीक्षण करना चाहिए।

सचिव, राजभाषा विभाग ने हिन्दी की संवैधानिक स्थिति और इस वर्ष के लिए हिन्दी संबंधी कार्यक्रम पर प्रकाश डाला तथा ग्रामीण विकास मंत्रालय में संयुक्त सचिव श्री जे० एन० कौल ने मंत्रालय में हिन्दी में किए जा रहे कार्यों की स्थिति से समिति को अवगत कराया।

अन्त में मंत्री महोदय ने कुरुक्षेत्र पत्रिका को पाक्षिक बनाने के लिए आदेश दिया और कहा कि इसकी प्रसार संख्या बढ़ाई जाए। विकास खण्ड ग्रामों के विकास के लिए मुख्य आधारशिला हैं, इसलिए इस पत्रिका को देश के सभी विकास खण्डों में भेजा जाए और उनकी समस्याओं तथा विचारों को इसमें पर्याप्त प्रतिनिधित्व मिलना चाहिए।

अध्यक्ष महोदय को धन्यवाद देते हुए समिति की बैठक समाप्त हुई। □

प्रस्तोता—राजेन्द्र धमीजा
डब्ल्यू जैड 562,
शाम नगर, नई दिल्ली-18

कूड़े-कचरे में ऊर्जा का वास

कीर्ति कुमार

कूड़े-कचरे से गैस, आप सोचेंगे क्या मजाक है। जी हां, यह मजाक नहीं असलियत है। आपने बायोगैस का नाम सुना होगा, गोबर गैस के बारे में पढ़ा होगा। पर साहब उस सबकी चर्चा यहां नहीं होगी। मैं गंदगी के ढेर में बसी गैस की बात कर रहा हूं। ढेर से बदबू आती है, सर भन्ना उठता है, जी मिचलाने लगता है। यह म्यूनिसिपैलिटी वालों की नाक में दम कर देता है। उससे क्या नहीं हो सकता? बीमारी फैल सकती है, महामारी जन्म ले सकती है। पर बलिहारी है विज्ञान की, टैक्नालाजी की जिसने बड़े ही कारगर ढंग से इस समस्या को हल कर दिया है। दुनिया के बड़े-बड़े नगरों ने इस दिशा में काफी तरक्की कर ली है। आइए, देखिए कूड़े-कचरे की करामात विज्ञान के हाथ।

महानगर मास्को। एक बंद लारी। एक हजार से भी अधिक ऐसी लारियां सिलवर से पुती इमारत की ओर बढ़ रही हैं। लारी के आते ही बड़े-बड़े गेट एक तरफ सरक जाते हैं। लारी के हाल में प्रवेश करते ही दरवाजा अपने आप बंद हो जाता है। मास्को में हर रोज 1 करोड़ 60 लाख घन मीटर कचरा पैदा होता है। इस लारी में उसका एक नन्हा सा अंश है। इमारत के भीतर कूड़े-कचरे के ढेर की छंटाई अपने-आप होती है। इलैक्ट्रोमैगनेटिक यंत्रों से कचरे में पड़ी धातु अलग कर दी जाती है। एक घूमती हुई छलनी के द्वारा शीशे जैसे टुकड़े अलग किए जाते हैं। भारी कचरा जला दिया जाता है जबकि कचरे के छोटे-छोटे टुकड़ों को और पीसा जाता है पानी मिलाकर। चार दिन तक यह मसाला एक बायो-थर्मल चैम्बर में पड़ा रहता है। इसके बाद यह मसाला बन जाता है बढ़िया जीवधारी खाद भूमि के लिए जिसे पाकर भूमि सोना उगलने लगती है। विज्ञान की भट्टी में तपकर यह कचरा शुद्ध खरा सोना बन जाता है। इससे गर्म-गर्म गैस निकलती है जो पास पड़ौस के उद्योग धंधों के काम आती है। रूस में ऐसे अनेक कचरा शोधक कारखाने हैं।

गली-सड़ी सब्जी आदि में जलने वाली गैस होती है, उसका ज्ञान भारतीय वैज्ञानिक एलेसांड्रो को 1776 में हो गया था। पर नगरों तथा गांवों में लाखों टन कूड़े-कचरे से लाभ उठाने का कोई कारगर तरीका नहीं था। घनी आबादी वाले शहरों के लिए तो यह मुसीबत और आफत

की जड़ है, सुरसा जैसी गभीर समस्या है। इस कचरे को उठाए कौन? पैसा कौन फूंके? नगरपालिका और नगर निगम के सामने यही प्रश्न मुंह बाये खड़ा है। कैसा विचित्र संयोग है। मनुष्य का तकनीकी ज्ञान बढ़ता जा रहा है। नित नई बुलंदियों को छूता जा रहा है। मानव के जीवन-स्तर को उसने नया रूप नया अर्थ दिया है। पर उसका दूसरा पहलू भी है। वहीं से जन्म होता है कूड़े-कचरे और प्रदूषण का। पर विज्ञान ने इस चुनौती को भी स्वीकार किया। हम चीजों को फेंक देते हैं कूड़ा समझ कर। वही हमारे लिए समस्या बन जाता है। इसी निरर्थक को सार्थक बना देता है विज्ञान। ठोस, द्रव और गैस वाले तीन रूप इसके होते हैं।

आम तौर पर ठोस गंदगी को ही 'कचरे' की संज्ञा दी जाती है। इस कचरे का पालना होता है रसोई घर, स्टोर, रेस्तरां आदि स्थानों में। भारत जैसे गर्म देश में गोश्त और सब्जी जल्दी ही सड़ने लगती है। इसके फलस्वरूप मक्खियाँ भी भिनभिनाने लगती हैं, चूहे घरों में अड्डा जमा लेते हैं। इसे कौन भुक्तभोगी नहीं जानता। बदबू तो पहले पड़ती ही है। उसकी कौन कहे।

कचरे का दूसरा रूप है कूड़ा। ठोस कूड़ा जिसे जलाया जा सकता है। देर तक रखा जा सकता है। यह घरों, स्टोरों, संस्थाओं, दफ्तरों आदि से निकलता है। एक न जलने वाला कूड़ा भी होता है। अभिप्राय यह है कि उसे मामूली तापमान पर फूंका नहीं जा सकता। इस श्रेणी में आते हैं टिन, डिब्बे, कांच, खनिज पदार्थ, धातु के फर्नीचर आदि। इसके अलावा सड़कों, गलियों, बाजारों में भी धूल, राख और महीन कण वाले पदार्थों का वास होता है।

रद्दी

विज्ञान की नज़र में रद्दी में कोई 28 तत्व होते हैं और उनकी प्रतिशतता भी अलग-अलग है। मोटे तौर पर यह इस प्रकार है: कागज की 53 प्रतिशत, धातु की 7 प्रतिशत, कांच और चीनी मिट्टी की 8 प्रतिशत, लकड़ी के बुरादे, टुकड़े, बाग-बगीचों की पत्तियों की 9 प्रतिशत, नमी की 9 प्रतिशत। ठोस रद्दी न केवल भद्दी समस्या है बल्कि वह हवा तथा पानी को भी खराब करती है, खासतौर पर उस समय जब उसमें से सड़ांध आने लगती है। दूसरी मुसीबत यह है, अगर उसे मामूली तापमान पर जलाने की कोशिश की जाए तो उससे गंभीर प्रदूषण फैल सकता है। कड़वा और नीम चढ़ा। नगरों में प्रति व्यक्ति कचरे का औसत ढाई और चार किलो प्रतिदिन का होता है।

नई रद्दी पदार्थों में काफी ऊष्मा (गर्मी) होती है। अतः इसे फूंकने में ज्यादा ईंधन की दरकार नहीं होती। यदि उसमें जल का अंश 50 प्रतिशत से अधिक न हो, अज्वलनशील तत्व 55 प्रतिशत से अधिक न हो, ज्वलनशील तत्व कम से कम 25 प्रतिशत हो तो उसे आत्मदाही कहा जा सकता है। उसे बिना तेल अथवा गैस की मदद से भट्टी में फूंका जा सकता है। भट्टी में शोधे जाने पर यह कचरा अपने आकार में 10 प्रतिशत छोटा हो जाता है। इससे निकलने वाले ताप से भाप बन सकती है। भाप से बिजली बन सकती है अथवा ठंडे देशों में कमरों को गर्म रखा जा सकता है। आज हमारे सामने ऊर्जा संकट है। यह गुणों की खान हमारे लिए वरदान सिद्ध हो सकती है। राष्ट्रीय बचत के लिए अमोघ अस्त्र बन सकती है। भारत में तो ठोस कचरे को धरती में दबा दिया जाता है पर यूरोप में यह संभव नहीं। वहां खाली जमीन है नहीं। अतः वहां उसे जलाया जाता है। बड़ी-बड़ी भट्टियों में। यूरोप में जर्मनी इस विधा में अग्रणी है। उसने अनेकानेक तरीके इजाद किए हैं। तीन बड़े-बड़े कारखाने वहां हैं। पर सबसे बड़ा कारखाना (भस्मशाला) हालैंड में है। उसकी क्षमता है 700,000 टन रद्दी भस्मीकरण की प्रति वर्ष। जापान भी अब इस दिशा में अग्रसर हो रहा है। 600 से भी अधिक ऐसे कारखाने वहां हैं। केवल टोकियो में ही 29 कारखाने हैं। 1976 के बाद जापान में ऐसी कानूनी व्यवस्था है कि कूड़े-कचरे को इन कारखानों में ही भेजना होगा। कचरे का स्थान सड़क नहीं, कारखाना होगा। अमरीका और कनाडा भी पीछे नहीं हैं।

अब इसका आर्थिक पहलू भी देखें। इनका लागत पक्ष क्या होगा? क्या इसे आजमाया जा सकता है? उत्तर है हां। अब तक के आंकड़े यही कहते हैं। विश्लेषण इस प्रकार है: हम जिस रद्दी को फेंक देते हैं उसकी कीमत ऊर्जा के हिसाब से हुई 200 रुपये प्रति टन। यदि इसे इकट्ठा करके गलत ढंग से भूमि में गाड़ा जाए तो बहुत सा पैसा बर्बाद होता है। वातावरण तो गंदा होता ही है। खाली भूमि है नहीं। है तो दूर-दराज़ जगहों पर। वहां तक ढोने का खर्चा। हो सकता है कि भस्म करने की प्रक्रिया में साधारण प्रक्रियाओं से ज्यादा खर्च आए पर उसे विभिन्न खातों में डाल दिया जाए तो हिसाब बराबर बैठ जाएगा।

एक प्रश्न यह भी है। क्या लगातार कचरा नगरों में मिल सकता है? अनंत काल तक मिल सकता है। विश्व का प्रतिदिन का औसत देखिए। मनीला—4200 टन, टोरेंटो—4500 टन, मूल्य बना 5 लाख रुपये प्रतिदिन। अमरीका का इससे ऊर्जा उत्पादन है 900 ट्रिलियोन ब्रिटिश ताप एकक प्रति वर्ष। हमारी स्थापित क्षमता से यह तिगुना है।

भारत में हम यदि ठोस कचरे के 60 प्रतिशत का भी उपयोग कर लें तो हमारी विद्युत क्षमता दुगनी हो सकती है। केवल कलकत्ता, बम्बई, मद्रास और नई दिल्ली जैसे महानगरों पर ही यदि हम ध्यान केंद्रित करें तो हम वर्तमान अणु-बिजलीघरों के बराबर ऊर्जा अर्थात 700 मेगावाट बिजली पैदा कर सकते हैं। 5–7 वर्ष के बाद ही यह क्षमता दुगनी की जा सकती है। इस प्रकार आम के आम और गुठली के दाम हो सकते हैं। स्वास्थ्य भी बनेगा, बचत भी होगी।

भारत के पास भी इस संबंध में पर्याप्त तकनीकी ज्ञान है। यदि हम प्रयास करें तो ऊर्जा-गर्मी कचरे से अनेक लाभ उठाए जा सकते हैं। दिल्ली में यह प्रयोग ओखला के पास शुरू हो चुका है। निकट भविष्य में हम उससे भारी लाभ उठा सकेंगे। आशा है कि यह लाभकारी परंपरा दिनोदिन फलती-फूलती जाएगी। एक न एक दिन अवश्य रंग लाएगी। □

हरित क्रांति के द्वितीय चरण की आवश्यकता

डा० बद्री बिशाल त्रिपाठी

कृषि भारतीय अर्थ व्यवस्था का सर्वाधिक महत्वपूर्ण व्यवसाय है। देश की 72 प्रतिशत कार्यशील जनसंख्या अपनी आजीविका के लिए कृषि क्षेत्र पर निर्भर है। देश के राष्ट्रीय उत्पाद में इसका योगदान 44.9 प्रतिशत है तथा कुल निर्यात मूल्य के 45.50% भाग की प्राप्ति कृषि क्षेत्र से प्राप्त वस्तुओं के निर्यात से होती है। यह देश की समस्त जनसंख्या के लिए खाद्यान्न पूर्ति का स्रोत होने के साथ-साथ विभिन्न आधारिक उद्योगों यथा चीनी, सूती वस्त्र, जूट, और तिलहन आदि के लिए कच्चे पदार्थ की पूर्ति का भी आधार है। कृषि क्षेत्र में देश की जनसंख्या का बहुत बड़ा भाग समाहित है इस कारण यह अन्य उत्पादक क्षेत्रों के उत्पादनों की मांग का एक महत्वपूर्ण आधार है जो किसी भी क्षेत्र के प्रसार व उत्पादन वद्धि का आधारिक घटक है। परन्तु ब्रिटिश शासन काल में सरकार की तटस्थ व शोषणकारी आर्थिक नीति के फलस्वरूप देश की कृषि अवरोधग्रस्त रही। तकनीकी सुधारों के अभाव और दोषपूर्ण भू-धारण पद्धतियों के कारण कृषि उत्पादन व उत्पादिता कम होती गई। फलतः अविभाजित भारत में खाद्यान्नों के उत्पादन सूचकांक 1904-05 के 100 की तुलना में 1946-47 में घटकर 95.7 हो गए। खाद्यान्नों की उत्पादिता में तो अत्यन्त गिरावट आई। खाद्यान्न फसलों के उत्पादिता सूचकांक 1904-05 के 100 से घटकर 1946-47 में 84 हो गए। इससे यह प्रतीत होता है कि यदि खाद्यान्न फसलों के अन्तर्गत क्षेत्र-वृद्धि न हुई होती तो खाद्यान्न उत्पादन की स्थिति अत्यन्त खराब हो गई होती। एक ओर निम्न स्तरीय स्थैतिक उत्पादन और दूसरी ओर बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उपलब्धि की स्थिति अत्यन्त खराब होती गई। 1904-05 में प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उपलब्धि 200 कि० ग्रा० वार्षिक थी जो 1946-47 में घटकर 152 कि० ग्रा० वार्षिक हो गई।

इस प्रकार की पृष्ठभूमि और कृषि के आधारिक महत्व को देखते हुए स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद कृषि विकास को विकास कार्यक्रमों के वरीयता क्रम में सर्वोच्च स्थान दिया गया और प्रथम पंचवर्षीय योजना को कृषि प्रधान योजना बनाया गया तथा अन्य पंचवर्षीय योजनाओं में उत्तरोत्तर बढ़ती धनराशि व्यय की जा रही है। नियोजन काल में किए गए कृषि विकास प्रयासों को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है: 1965-66 से पूर्व की अवधि और उसके पश्चात की अवधि। 1965-66 से पूर्व की अवधि में कृषि विकास का आधार मुख्यतः संस्थागत सुधार और कृषित क्षेत्र का प्रसार था। 1949-50 से 1964-65 की अवधि में खाद्यान्न फसलों के उत्पादन में 2.98 प्रतिशत प्रतिवर्ष की यौगिक दर वृद्धि हुई और इस अवधि में खाद्यान्नों का उत्पादन 50 मिलियन टन से बढ़कर 89 मिलियन टन हो गया। लेकिन 1965-66 और 1966-67 के सघन सूखे के कारण देश में उन वर्षों में खाद्यान्नों की स्थिति अत्यन्त खराब हो गई। खाद्यान्नों का उत्पादन 1966-67 में घटकर 72 मिलयिन टन हो गया। उस समय यह अनुमान लगाया जाने लगा था कि भारत में लगभग 10 मिलियन व्यक्तियों की मृत्यु भूख से हो जाएगी। देश को गम्भीर भुखमरी से बचाने के लिए औसतन 10 मिलियन टन खाद्यान्नों का आयात किया जा रहा था। देश के वैज्ञानिकों, अर्थशास्त्रियों और नीति-निर्धारकों के समक्ष देश में खाद्यान्नों की यह बिगड़ती हुई स्थिति सबसे बड़ी चुनौती थी।

अकाल और आयात जनित इस चुनौती के समाधान और कृषि जन्य पदार्थों की आगामी मांग को पूरा करने के लिए 1966 की खरीफ फसल से तकनीकी समाधान खोजने का प्रयास किया गया जिसे 'हरित क्रांति' की संज्ञा दी गई। हरित क्रान्ति के अब तक के कार्यान्वियन के फलस्वरूप भारत की गणना अनाज उत्पादन के क्षेत्र में विश्व के सबसे बड़े चौथे और चावल उत्पादन में सबसे बड़े दूसरे देश के रूप में की जाने लगी है। वर्ष 1966-67 में खाद्यान्नों का उत्पादन 72 मिलियन टन था जो 1978-79 में बढ़कर 131 मिलियन टन हो गया। देशव्यापी सूखे के कारण 1979-80 में उत्पादन में कमी आई। परन्तु 1980-81 में पुनः उत्पादन बढ़कर 132 मिलियन टन हो गया। 1979-80 में प्रतिकूल मौसम के बावजूद देश में 110 मिलियन टन खाद्यान्नों का उत्पादन हुआ जिससे यह प्रतीत होता है कि मानसून पर हमारी निर्भरता घटी है। पहले सर्वथा अनुकूल मौसम में भी गेहूं का उत्पादन 10 मिलियन टन से अधिक नहीं होता था और अब प्रतिकूल मौसम में भी गेहूं का उत्पादन 26 मिलियन टन से कम नहीं होता। इससे भी अधिक महत्वपूर्ण तत्व यह है कि अब पहले के गैर-गेहूं उत्पादक राज्यों यथा पश्चिमी बंगाल, गुजरात और महाराष्ट्र में भी गेहूं का और पहले के गैर चावल उत्पादक राज्यों यथा पंजाब, हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश में भी चावल का उत्पादन होने लगा है। हमारे कृषि विकास कार्यक्रमों ने न केवल देश को भुखमरी के कगार से हटाकर आत्म निर्भर बना दिया वरन् सम्प्रति निर्यात करने की स्थिति में भी ला दिया है। भूख और परावलंबिता के खिलाफ इस युद्ध में हमारे कृषि वैज्ञानिकों और विशेषज्ञों की अनवरत साधना निर्णायक रही है और इसकी कार्यविधि में सिंचाई का प्रसार, अधिक उपज देने वाल चमत्कारी बीजों का प्रचलन, रसायनिक उर्वरक और कीटनाशकों का प्रसार, उन्नत कृषि यंत्र, और खेती की सुधरी हुई विधियों के कार्यक्रम सम्मिलित हैं। अब अपेक्षाकृत अधिक कृषि क्षेत्र पर उत्तम अनाजों का उत्पादन किया जाता है। मोटे अनाजों

के अन्तर्गत क्षेत्र में कमी आई है। फसल सघनता में वृद्धि होने के कारण कुल कृषित क्षेत्र में वृद्धि हो गई। विभिन्न अनाजों, गन्ना और कपास का उत्पादन पिछले 15 वर्षों में बढ़कर दुगने से अधिक हो गया है। इस प्रकार अभाव और आयात की समस्या के समाधान में हरित क्रांति का निष्पादन सराहनीय रहा है। परन्तु कुछ वर्तमान और कुछ संभावित आगामी समस्याएं कृषि विकास कार्यक्रमों और विशेषकर हरित-क्रान्ति के समक्ष चुनौती के समान विद्यमान हैं जिनके लिए कुछ अतिरिक्त प्रयासों की आवश्यकता है। इन चुनौतियों और उनके समाधान के प्रयासों का यहां विश्लेषण किया गया है।

आगामी जनसंख्या : आर्थिक विकास हो या न हो हमारे बहुविध प्रयासों और इच्छाओं के विपरीत आबादी बढ़ती जा रही है। देश के विकास कार्यों और उनके धनात्मक परिणामों में यद्यपि आशातीत वृद्धि हुई है लेकिन आबादी वृद्धि की तेज गति के कारण विकास कार्यों के अधिकांश धनात्मक परिणाम बढ़ी हुई जनसंख्या में विलीन हो गए और शुद्ध परिणाम अत्यन्त कम हो गए और यही प्रक्रिया जारी है। यही कारण है कि नियोजन काल की अब तक की अवधि में राष्ट्रीय आय में औसतन 3.2 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से वृद्धि हुई। जबकि प्रति व्यक्ति आय में मुश्किल से 1.2 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से ही वृद्धि हो सकी है। यदि जनसंख्या वृद्धि का सबसे साधारण अनुमान लगाया जाए तो भी यह अनुमान किया जाता है कि 2000 ई० तक सन् 1981 की जनगणना में लगभग 31 करोड़ आबादी जुड़ जाएगी और उस समय देश की आबादी लगभग 100 करोड़ हो जायगी। उस समय देश में लगभग 200 मिलियन टन खाद्यान्नों की आवश्यकता होगी। आगामी जनसंख्या की आवश्यकता को पूरा करने के लिए अगले 19 वर्षों में 68 मिलियन टन अतिरिक्त खाद्यान्न उत्पन्न करने की आवश्यकता है। 1950-51 से 1980-81 के 30 वर्षों की अवधि में विभिन्न संस्थागत और तकनीकी प्रयासों के फलस्वरूप खाद्यान्नों की उपज में 78 मिलियन टन (55 मिलियन टन से 133 मिलियन टन) की ही वृद्धि हो सकी है। इस परिप्रेक्ष्य में अगले 19 वर्षों में खाद्यान्नों का 68 मिलियन टन अतिरिक्त उत्पादन करना अत्यन्त कठिन कार्य है। जनसंख्या बढ़ने पर यद्यपि समस्त वस्तुओं और सेवाओं की मांग पर अतिरिक्त दबाव पड़ता है लेकिन प्रत्यक्ष और शीघ्रगामी प्रभाव कृषि जन्य पदार्थों पर ही होगा। देश में खाद्यान्नों की गुणात्मक कमी तो है ही यदि पुनः मात्रात्मक कमी हो गई तो स्थिति संभालना अत्यन्त कठिन हो जाएगा।

समस्याग्रस्त फसलें : अब तक हरित क्रान्ति की सफलता कुछ सीमित फसलों में ही मिली है, विशेषकर गेहूं की फसल में। इसी कारण इसे गेहूं की क्रान्ति कहा जाता है। दालें, तिलहन, मसाले, सब्जियां, धान और गन्ने की फसल में अभी बहुत कुछ करने को शेष है। खाद्य पदार्थों में सूखी मछली के पश्चात् सर्वाधिक प्रोटीन दालों में ही पाई जाती है। एक किलोग्राम सूखी मछली में 335 ग्राम और एक किलोग्राम दाल में 250 ग्राम तक प्रोटीन पाई जाती है। दालें देश की न केवल शाकाहारी अपितु मांसाहारी जनसंख्या के लिए भी प्रोटीन पूर्ति की स्रोत हैं क्योंकि बढ़ती हुई कीमतों के कारण मांस बहुतायत मांसाहारी जनसंख्या की क्रय क्षमता से बाहर हो गया है। योजनाकाल में दालों के स्थैतिक या घटते हुए समग्र उत्पादन और दूसरी ओर सतत बढ़ती हुई जनसंख्या से मांग बढ़ने के कारण दालों की प्रति व्यक्ति उपलब्धि सतत कम होती गई। वर्ष 1958-59 में दालों की प्रति व्यक्ति दैनिक उपलब्धि 75 ग्राम थी जो 1976-77 में घटकर 44 ग्राम हो गई और अब तो दैनिक उपलब्धि 40 ग्राम के आस-पास ही है। आहार विशेषज्ञों के अनुसार मनुष्य के संतुलित भोजन में प्रति दिन 60 ग्राम दालों की आवश्यकता होती है। स्पष्टतः दालों की दैनिक उपलब्धि में 25 प्रतिशत की कमी है। निर्धारित मान के अनुसार इस समय देश में 68.5 करोड़ जनसंख्या के लिए 14.3 मिलियन टन दालों की आवश्यकता है जबकि दालों का वर्तमान उत्पादन मात्र 11.5 मिलियन टन का ही है। वस्तुतः नियोजन काल में समस्त कृषि उपज में 2.6 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से वृद्धि हुई है जबकि दालों का उत्पादन 0.4 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से घटा है। 1958-59 में 13.1 मिलियन टन दालों का रिकार्ड उत्पादन हुआ लेकिन 1976-77 तक यह घटकर 11.4 मिलियन टन हो गया। 1978-79 में दालों का उत्पादन कुछ बढ़ा लेकिन 1979-80 में घटकर पुनः 11.5 मिलियन टन हो गया। भारत में दालों की औसत उपज 1978-79 में 517 कि० ग्रा० प्रति हैक्टेयर थी जबकि उस वर्ष दालों की प्रति हैक्टेयर औसत उपज अमेरिका, चीन और पाकिस्तान में क्रमशः 1612 कि० ग्रा०, 1137 कि० ग्रा और 551 कि० ग्रा० थी। दालों की विश्व की औसत उपज 771 कि० ग्रा० प्रति हेक्टेयर से भी भारत की औसत उपज नीची है। विश्व में बोये जाने वाले कुल दाल क्षेत्र का 29 प्रतिशत भाग भारत के पास है जबकि विश्व के कुल दाल उत्पादन में भारत का योगदान केवल 19 प्रतिशत है। यह अनुमान लगाया जाता है कि 2000 ई० तक देश में 247 लाख टन दालों की आवश्यकता होगी अर्थात् यदि दालों की उपज वर्तमान स्तर से बढ़कर दुगनी हो जाए तो शायद हमारी दलहन की आवश्यकता पूरी हो सकेगी।

संतुलित आहार के परिप्रेक्ष्य में सब्जियों की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है, इनसे भोजन में खनिज, प्रोटीन, विटामिन और कार्बोहाइड्रेट की पूर्ति होती है। परन्तु सब्जियों का उपभोग-स्तर भारत में बहुत नीचा है। यहां प्रतिदिन समस्त सब्जियों का उपभोग स्तर मात्र 92 ग्राम है जबकि प्रत्येक प्रौढ़ व्यक्ति को अपना सामान्य स्वास्थ्य बनाए रखने के लिए 284 ग्राम सब्जियों की आवश्यकता होती है। भारत में सब्जियों की फसलों के अन्तर्गत कुल 1.2 मिलियन हैक्टेयर क्षेत्र है जिस पर प्रति वर्ष लगभग 17.3 मिलियन टन सब्जियों का उत्पादन होता है। हमारा सब्जियों का उत्पादन स्तर अत्यन्त नीचा है। भारत की जलवायु और प्राकृतिक भौतिक संरचना विभिन्न मसालों के उत्पादन हेतु अत्यन्त अनुकूल है। इसी कारण भारत को विभिन्न मसालों के उत्पादन का प्राकृतिक घर कहा जाता है और यह प्राचीन काल से ही विभिन्न मसालों जैसे मिर्च, जीरा, हल्दी, तेजपात, अदरक आदि के उत्पादन तथा निर्यात में अग्रणी रहा है। इन मसालों के

उत्पादन में वही परम्परागत तरीका प्रचलित है । इसी प्रकार तिलहनों की औसत उपज अत्यन्त नीची है । उदाहरण के लिए भारत में मूंगफली का प्रति हैक्टेयर औसत उत्पादन 800 कि० ग्रा० है जबकि नाइजीरिया और जापान में इसका प्रति हैक्टेयर औसत उत्पादन क्रमशः 1600 और 2400 कि० ग्रा० है। इन विभिन्न व्यापारिक फसलों के संदर्भ में मुख्य बात यह है कि व्यावसायिक फसल होते हुए भी इनका व्यावसायिक स्तर पर उत्पादन नहीं किया जाता है। सब्जियों, तिलहनों, और मसालों के संदर्भ में संगठित सक्षम शोध प्रयास नहीं किए जा सके हैं और न ही वे कृषकों की फसल प्रणाली में अधिक सफल ढंग से अपनाई जा सकी है। नियोजन-काल में इन फसलों के अन्तर्गत न तो क्षेत्र बढ़ सका है और न ही कोई विशिष्ट तकनीकी सुधार हो सका है। हरित क्रान्ति के फल-स्वरूप धान की फसल में भी आंशिक सफलता मिली है। देश की खेतिहर संरचना में सबसे अधिक क्षेत्र में बोई जाने वाली और सबसे अधिक समग्र उत्पादन वाली यह फसल अभी देश के बहुतायत भागों में परम्परागत रूप में ही है। धान मुख्य रूप से वर्षाकालीन फसल है। जब वातावरण अधिक आर्द्र रहता है। इस प्रकार के नम वातावरण में तृण नाशक जीवों के अभ्युदय और प्रसार के अधिक अवसर विद्यमान रहते हैं। इस कारण धान की नवीन किस्मों की फसल बहुधा रोगग्रस्त होकर कृषकों के प्रयास के प्रतिफल की संभावना को अत्यन्त क्षीण कर देती है।

समस्याग्रस्त क्षेत्र : अब तक विभिन्न फसलों के लिए विकसित की गई अधिक उपज देने वाली किस्मों की सफलता मुख्य रूप से उर्वर और सुनिश्चित सिंचाई सुविधा वाले कतिपय राज्यों यथा पंजाब, केरल, हरियाणा, तमिलनाडु और पश्चिमी उत्तरप्रदेश तक ही सीमित रही है। जिन राज्यों में नवीन तकनीक का समावेश हुआ वे विकास प्रक्रिया में अत्यन्त आगे निकल गए, शेष राज्यों की कृषि अब भी अवरोधग्रस्त है । राष्ट्रीय कृषि आयोग, 1976 के अनुमान के अनुसार 1962–74 की अवधि में पंजाब और हरियाणा में फसल उत्पादन की संवृद्धि दर क्रमशः 8.35 और 6.66 प्रतिशत प्रतिवर्ष रही है जबकि इसी अवधि में मध्य प्रदेश और जम्मू-कश्मीर में फसल उत्पादन की संवृद्धि दर मात्र 0.79 प्रतिशत और उड़ीसा, नागालैण्ड तथा महाराष्ट्र में तो संवृद्धि दर ऋणात्मक रही है। विभिन्न राज्यों के मध्य फसलों के उत्पादन स्तर में अत्यधिक अन्तर है यथा पंजाब में प्रति हैक्टेयर गेहूं की औसत उपज 2449 कि० ग्रा० है जबकि कर्नाटक में प्रति हैक्टेयर औसत उपज मात्र 667 कि० ग्रा० ही है। गन्ने की प्रति हैक्टेयर औसत उपज तमिलनाडु में 96982 कि० ग्रा० है जबकि मध्यप्रदेश में गन्ने की प्रति हैक्टेयर औसत उपज मात्र 30684 कि० ग्रा० ही है। देश की कुछ भूमियां विशेष समस्याग्रस्त हैं। देश की भौतिक संरचना अत्यन्त विषम है । एक ओर पहाड़ी, पठारी, सूखाग्रस्त और ऊसर भूमियां हैं तो दूसरी ओर बाढ़ विभीषिकाग्रस्त और अत्यन्त नीची भूमियां है। देश में लगभग 7.00 मिलियन हैक्टेयर भूमि लवणीय है जिसका अधिकांश भाग क्षारीय है जिसे ऊसर भूमि कहा जाता है जिसमें सोडियम की मात्रा अधिक होने के कारण पौधों का विकास नहीं हो पाता है। मानसून की बेढंगी और अनिश्चित गति के कारण यद्यपि देश की समस्त कृषि प्रणाली में जोखिम का कुछ अंश निहित रहता है तथापि कुछ क्षेत्र सूखा और बाढ़ से अधिक प्रभावित रहते हैं। देश के कुल भौगोलिक क्षेत्र 329 मिलियन में से लगभग 34 मिलियन क्षेत्र प्रति वर्ष बाढ़ग्रस्त और 58.5 मिलियन हैक्टेयर क्षेत्र सूखाग्रस्त रहता है। प्रारम्भिक, अधपकी या पकी फसल का नष्ट होना यहां की हर वर्ष की कहानी है। सूखे और बाढ़ की मार के निवारणार्थ राहत कार्यों पर भारी मात्रा में धनराशि व्यय करनी पड़ती है। सूखा और बाढ़ जन्य फसल और सम्पत्ति की विनाशलीला के कारण इन क्षेत्रों की जनसंख्या आज भी घोर गरीबी का जीवन-यापन करती है। विभिन्न पिछड़े राज्यों और समस्याग्रस्त क्षेत्रों की कृषि को विकसित करना एक चुनौती के समान है। इस प्रकार की कृषिगत विषमताओं के कारण राज्यीय आर्थिक विषमताओं को प्रश्रय मिल रहा है जो संविधान में अंगीकृत सामाजिक न्याय की संकल्पना के सर्वथा प्रतिकूल है।

हरित क्रांति का द्वितीय चरण : हरित क्रान्ति के माध्यम से अब तक के प्रयासों के फलस्वरूप खाद्यान्नों की स्थिति में निःसन्देह सुधार हुआ है। परन्तु जैसा ऊपर संकेत किया जा चुका है कि विभिन्न फसलों, क्षेत्रों और आगामी जनसंख्या के लिए अभी बहुत कुछ करने को शेष है। फिर भी एक तथ्य स्पष्ट है कि अब तक के प्रयासों के फलस्वरूप आधारिक अवस्थापनागत सुविधाएं निर्मित की जा चुकी हैं जिनके आधार पर आगामी कृषि विकास की रूप-रेखा बनाई जा सकती है। इसी आधार पर यह भी कहा जा सकता है कि भारत हरित क्रान्ति के द्वितीय चरण के द्वार पर है। वस्तुतः अब स्थिति भी यही है। अब हरित क्रान्ति को आरम्भ करने की समस्या नहीं अपितु उसमें गुणात्मक सुधार करने की आवश्यकता है। समस्याग्रस्त फसलों, क्षेत्रों और अन्य कृषिगत सुधारों के लिए हरित क्रान्ति के द्वितीय चरण और उसकी कार्य-पद्धति में निम्नलिखित तत्वों पर विशेषकर ध्यान केन्द्रित करने की आवश्यकता है।

उत्पादिता वृद्धि : नियोजन काल के प्रथम दशक में कृषि उत्पादन वृद्धि में प्रमुख भूमिका फसलों के अन्तर्गत क्षेत्र वृद्धि की रही है। द्वितीय और तृतीय दशक में क्षेत्र वृद्धि का योगदान क्रमशः कम होता गया है। अब तो फसलों के अन्तर्गत क्षेत्र बढ़ाकर उत्पादन बढ़ाने की संभावना अत्यन्त क्षीण हो गई है। इस कारण समग्र उत्पादन को वृद्धि के लिए हरति क्रान्ति के द्वितीय चरण में कृषि उत्पादिता बढ़ाना मुख्य लक्ष्य होना चाहिए। यद्यपि योजनाकाल में विशेषकर हरित क्रान्ति के पिछले 15 वर्षों की अवधि में कृषि उत्पादिता में सुधार हुआ है फिर भी हमारी कृषि की प्रति भूमि इकाई और प्रतिश्रम इकाई उपज अत्यन्त कम है। यह भी सुनिश्चित है कि कृषि अर्थव्यवस्था में उत्पादिता बढ़ाकर समग्र उत्पादन बढ़ाने की पर्याप्त संभावनाएं विद्यमान हैं। राष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न फसलों के औसत उत्पादन और राष्ट्रीय फार्मों के उत्पादन आंकड़ों के आधार पर भूमि में निहित उत्पादन क्षमता का अनुमान लगाया जा सकता है। उक्त आधार के निम्नलिखित तालिका में दिए गए उत्पादन आंकड़ों से यह प्रतीत होता है कि सक्षम प्रसार सेवा और पर्याप्त तथा सामयिक विभिन्न कृषि निविष्टियों की आपूर्ति द्वारा कृषि उत्पादन स्तर वर्तमान की तुलना में निश्चित ही दुगना किया जा

सकता है। अभी भूमि में उत्पादिता वृद्धि की पर्याप्त संभावना है।

तालिका

प्रति हेक्टेयर औसत उत्पादन (क्विंटल में)

फसल	राष्ट्रीय औसत	प्रदर्शन फार्मों के औसत	राष्ट्रीय क्षमता
गेहूं	14.10	38.14	81.00
धान	12.35	51.49	130.00
ज्वार	5.91	35.54	67.50
मक्का	12.03	32.28	95.00

गैर खाद्यान्न फसलों में सुधार : हरित क्रान्ति की अब तक की अवधि में सर्वाधिक सफलता गेहूं की फसल में मिली है, आंशिक सफलता धान और गन्ने की फसल में मिली है। हरित क्रान्ति की आगामी अवधि में, दलहन, तिलहन, मसाले और सब्जियों की फसलों को विकसित करने का तुरन्त प्रयास किया जाना चाहिए। इन फसलों के लिए अधिक उपज देने वाले, कम परिपक्वता अवधि तथा विपरीत मौसम और विभिन्न बीमारियों को सहन कर सकने वाले बीजों के प्रसार की आवश्यकता है। यदि विभिन्न व्यापारिक फसलों के अधिक उपज देने वाले सक्षम बीजों का प्रचलन हो जाए और वे छोटे तथा सीमान्त किसानों के साथ-साथ नगर व कस्बों के निकट के किसानों की कृषि प्रणाली का अभिन्न अंग बन जाएं तो इन विविध व्यापारिक फसलों की कमी दूर हो जाएगी साथ-साथ खेतिहर संरचना के इन गरीब किसानों की आर्थिक स्थिति में भी सुधार हो सकेगा। पुनः अभी तक के अनुभवों से यह सिद्ध हो चुका है कि अधिक उपज देने वाले बीजों की सफलता मुख्य रूप से सुनिश्चित सिंचाई सुविधा वाले क्षेत्रों तक ही सीमित है और वे अनुकूल मौसम से ही प्रत्यक्षतः सम्बद्ध हैं। आज ऐसे बीजों के संचालन व प्रसार की आवश्यकता है जो कम वर्षा वाले और अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में सामान्य रूप से सक्षम हो सकें और मौसम की प्रतिकूलता सहन कर सकें। सुनिश्चित सिंचाई सुविधा की पृष्ठभूमि में विभिन्न व्यापारिक फसलों यथा दलहन, तिलहन, तम्बाकू और सब्जियों की वर्ष में तीन फसल तक ली जा सकती हैं। इससे समग्र कृषि उत्पादन तो बढ़ेगा ही साथ-साथ कृषि का विविधीकरण भी होगा।

स्थिति विशिष्ट शोध : यह निर्विवाद है कि विविधतायुक्त भारतीय अर्थ-व्यवस्था में समान कृषि प्रणाली सभी क्षेत्रों के लिए समान रूप से लाभदायक सिद्ध न हो सकेगी। देश के विभिन्न भागों में पृथक-पृथक फसलों की प्रधानता है। इस कारण हरित क्रान्ति के द्वितीय चरण में स्थितिपरक शोध की आवश्यकता है। क्षेत्र विशेष की जलवायु व संरचना के अनुरूप बीजों के प्रसार की आवश्यकता है। राष्ट्रीय व राज्य स्तर के किसी शोध संस्थान में उत्पादित और विकसित विभिन्न फसलों के बीज विविधतायुक्त भारतीय अर्थव्यवस्था में सर्वत्र समान रूप से उपज देने वाले नहीं होते। क्षेत्रीय प्रभाव के कारण एक स्थान की भौगोलिक संरचना, जलवायु और मिट्टी में निहित उर्वर तत्व तथा उनकी प्रकृति दूसरे स्थान से पृथक होते हैं। और फसलें मुख्यतः स्थिति विशिष्ट (लोकेशन स्पेसफिक) होती हैं। अतः विभिन्न स्थानों पर बीजों का निष्पादन विषम हो जाता है। उदाहरण के लिए सुगरकेन रिसर्च इन्स्टीट्यूट, कोयम्बटूर में विकसित गन्ने की अधिक उपज देने वाली विविध किस्में दक्षिणी भारत की परिस्थिति में तो अत्यन्त सक्षम हैं परन्तु उत्तर भारत में उनकी सफलता अत्यन्त सीमित है। उत्तर भारत में तीन-चार महीने कड़ी ठंड पड़ने के कारण गन्ने में निहित शर्करा तत्व अत्यन्त कम हो जाते हैं। इसी प्रकार गेहूं की अधिक उपज देने वाली किस्में मुख्यतः पंजाब, हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश में ही सफल हो सकी हैं। अतैव क्षेत्र विशेष की आवश्यकता के अनुसार फसलों के क्षेत्रीय प्रकृति के बीजों के प्रसार की आवश्यकता है। सम्प्रति देश में कुल 415 जिले हैं। विभिन्न जिलों की भू-संरचना, बनावट और मिट्टी में तो अंतर रहता ही है साथ-साथ एक ही जिले के विभिन्न भागों की भू-संरचना और बनावट में भी अंतर रहता है यथा, इलाहाबाद जिले के गंगापार और यमुनापार उपखंड एक दूसरे से पूर्णतः पृथक हैं। इस प्रकार मोटेतौर पर देश को विषम भौगोलिक संरचना वाले 1000–1200 भागों में विभक्त किया जा सकता है जिनके लिए पृथक-पृथक शोध संस्थानों की आवश्यकता है। इस प्रकार के शोध संस्थान स्थानीय समस्याओं के निदान में सक्षम भूमिका निभा सकेंगे। वे सम्बद्ध क्षेत्र के अनुरूप कृषि प्रणाली विकसित करने और निहित संभावनाओं के पूर्ण उपयोग के प्रति सतत क्रियाशील रहेंगे, जिनके परिणाम अवश्य ही धनात्मक होंगे।

कृषि निवेश : हरित क्रान्ति के आरम्भ से नवीन कृषि निवेशों यथा उन्नत बीज, रासायनिक उर्वरक, उन्नत कृषि यंत्र और कीटनाशकों के प्रयोग में भारी वृद्धि हुई है। इस सम्बन्ध में दो बातें विचारणीय हैं: प्रथम, नवीन कृषि निवेश बहुधा अधिक पूंजी की अपेक्षा करते हैं। अतः वे छोटे और सीमान्त किसानों की पहुंच से बाहर हो जाते हैं। अपनी दयनीय आर्थिक स्थिति के कारण वे कृषि निवेशों को खरीद नहीं पाते और समानान्तर प्रतिभूति के अभाव में मौद्रिक संस्थाओं से उन्हें ऋण भी नहीं मिल पाता है। इसके कारण नवीन कृषि निवेश बहुधा अपनी अविभाज्य प्रकृति के कारण छोटे और सीमान्त किसानों के लिए अनार्थिक भी होते हैं। अतः इन किसानों की कृषि अब भी परम्परावादी बनी हुई है। दूसरे नवीन कृषि निवेशों की बढ़ती हुई कीमतों के कारण प्रति हेक्टेयर शुद्ध आय कम होती जा रही है जिसकी पुष्टि भारत सरकार के राज्य फार्म निगम द्वारा संचालित राज्य कृषि फार्मों के आंकड़ों से होती है। जीटर ट्रैक्टर और 5 अश्व शक्ति के विद्युत मोटर की कीमत 1967 में क्रमशः 13700 और 984 रुपये थी। यह 1978 में बढ़ कर क्रमशः 43380 और 1700 रुपये हो गई। इस अवधि में कीटनाशकों, रासायनिक उर्वरकों और अन्य कृषि उपकरणों की कीमतें भी दुगने से अधिक हो गई। इन दो कारणों से अब ऐसी रीति नीतियों के प्रसार की आवश्यकता है जो कम पूंजी की अपेक्षा करती हों और बहुसंख्यक कृषकों की क्षमता के भीतर हों। स्थानीय कृषि यंत्रों को सुधारने और अत्यन्त कम या बिना ईंधन के चलने वाले सिंचाई साधनों के प्रसार की आवश्यकता है। इस देश में अपनी आवश्यकता के लिए रासायनिक उर्वरकों का उत्पादन नहीं कर

पाते। प्रयोग और उत्पादन के अंतराल को पूरा करने के लिए इन्हें ऊंची कीमतों पर आयात करते हैं तथापि नाम-मात्र की पूंजी से बहुसुलभ जैविक खादों को भूलते जा रहे हैं, जबकि जापान, जो स्वयं जैविक खादों का निर्यात करता है, जैविक खादों को अपनी कृषि प्रणाली के अभिन्न अंग के रूप में धारण किए हुए है।

उचित भूमि उपयोग : सदियों से कृषित भारतीय भूमि देश की व्यापक जनसंख्या की विविध आवश्यकताओं की पूर्ति का आधार रही है। परन्तु सुविचारित भूमि उपयोग नीति के परिणामस्वरूप आज पारिस्थितिक असंतुलन की स्थिति उत्पन्न हो गई है। परिणामतः भूमि-संरक्षण, पानी के भराव, खारेपन, बाढ़, सूखा और रेगिस्तानी क्षेत्र के प्रसार की समस्या बढ़ रही है। देश के कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 32.90 करोड़ हेक्टेयर क्षेत्र में से 30.50 करोड़ हेक्टेयर क्षेत्र के भूमि उपयोगिता के आंकड़े उपलब्ध हैं। भूमि उपयोग संरचना के आंकड़ों के अनुसार देश की 3.90 करोड़ हेक्टेयर भूमि शहरी व अन्य गैर-कृषि प्रयोगों तथा कृषि के अयोग्य बर्फीली भूमि के रूप में है। लगभग 4.00 करोड़ हेक्टेयर भूमि कृषि योग्य परती और बंजर भूमि के रूप में, 8.30 करोड़ हेक्टेयर क्षेत्र जंगल और स्थायी चरागाह के रूप में और 14.30 करोड़ हेक्टेयर क्षेत्र कृषि भूमि के रूप में वर्गीकृत है। यह भी सुविदित है कि कृषि क्षेत्र के प्रसार और जंगलों से मिलने वाले प्रत्यक्ष लाभ की धुन में वनों को निर्दयतापूर्वक काटा गया। विशेषकर इस शताब्दी के प्रथम अर्द्धांश में। परिणामतः देश की बहुतायत जमीन पर न तो जंगल हैं, न घास है और न ही उस पर खेती हो रही है। अब जंगलों के अन्तर्गत वर्गीकृत क्षेत्र 8.30 करोड़ हेक्टेयर क्षेत्र में से केवल 3.50 करोड़ हेक्टेयर क्षेत्र पर ही अच्छी तरह जंगल है। शेष 4.80 करोड़ हेक्टेयर क्षेत्र से बहुधा जंगल समाप्त हो चुके हैं। यदि इस जंगल विहीन 4.80 करोड़ हेक्टेयर क्षेत्र में ऊपर वर्णित 4.00 करोड़ हेक्टेयर उत्पादन क्षमतायुक्त किन्तु उपेक्षित कृषि योग्य परती और बंजर भूमियों को मिला दिया जाए तो यह प्रतीत होता है कि 8.80 करोड़ हेक्टेयर भू-क्षेत्र उत्पादक क्षमता सम्पन्न होते हुए भी अनुत्पादक पड़ा है। इसके अतिरिक्त एक व्यापक भू-क्षेत्र भूमिक्षरण, पानी के भराव, खारेपन और बाढ़ व सूखा की समस्या से ग्रस्त है, और इनकी प्रभावशीलता उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही है। नहरों के किनारे-किनारे की भूमियों में पानी के भराव और खारेपन की समस्या बढ़ती जा रही है। नहरों के किनारे की यह भूमियां अपेक्षाकृत अधिक उत्पादन दे सकती हैं परन्तु उनकी उत्पादन क्षमता व्यर्थ या नष्ट होती जा रही है। हरित क्रान्ति के द्वितीय चरण में इन समस्त समस्याग्रस्त और अल्प-प्रयुक्त भूमियों के विवेकयुक्त प्रयोग की प्रक्रिया पर जोर दिया जाना चाहिए।

यद्यपि उपरोक्त तत्वों पर विविध शोध संस्थानों और विकास कार्यक्रमों में कार्य किया जा रहा है परन्तु आगामी आवश्यकताओं और वर्तमान अपेक्षाओं के परिप्रेक्ष्य में अधिक सबल और सघन प्रयास की आवश्यकता है। □

धरती का श्रृंगार किया है पानी ने

जगमग करती बिजली का उपहार दिया है पानी ने ।।
सुख सुविधा से भरा हुआ संसार दिया है पानी ने ।।
झकर-झकर ज्वाला में जलकर
कितना पानी भाप बन गया,
काला बादल बनकर घूमा
फिर सतरंगा चाप बन गया,
ऊपर जाकर भी माटी से प्यार किया है पानी ने ।।
कूप, ताल को जीवन देता
बंजर खेतों को हरियाली,
चट्टानों में फूल खिलाता
पानी एक अनोखा माली,
गंगा सी नदियों का झिलमिल हार दिया है पानी ने ।।
अमृत सा शीतल जल बनकर
हर प्यासे की प्यास बुझाता,
उपजाकर धन-धान्य, फूल-फल
सारे जग की भूख मिटाता,
हर युग में इस धरती का श्रृंगार किया है पानी ने ।।

अब्दुल मलिक खान
प्रेसरोड;
भवानी मंडी-326502
जिला झालावाड़ (राज०)

संशोधित बीस सूत्री कार्यक्रम

श्रीमती मनुहरि पाठक

प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने "श्रम एव जयते" का नारा देकर सत्यमेव जयते के आदर्श वाक्य के साथ गीता के कर्मयोग के उपदेश को सही ढंग से देश के सामने पुनर्स्थापित किया है। सत्य की अंतिम विजय निश्चित है किन्तु इस विजय के लिए परिश्रम और उपाय समान रूप से आवश्यक हैं।

प्रधानमंत्री ने पहली जुलाई, 1975 को सुनियोजित विकास के लिए देश को बीस सूत्री कार्यक्रम के रूप में एक निश्चित तथा समयबद्ध दिशा दी थी। उन्होंने उस समय कहा था कि कठोर परिश्रम, उद्देश्यपूर्ण भावना तथा अनुशासन से ही देश में गरीबी के विरुद्ध संघर्ष किया जा सकता है। इस कार्यक्रम के आधार पर देश एक निश्चित दिशा में निश्चित गति के साथ आगे बढ़ा। इस कार्यक्रम के परिपालन में बीच में लगभग तीन वर्ष का अन्तराल आया। श्रीमती गांधी 1980 में फिर प्रधानमंत्री बनी और कार्यक्रमबद्ध प्रगति का रथ आगे चला।

14 जनवरी को श्रीमती गांधी के नए कार्यकाल के दो वर्ष पूरे हो गए। पुराने बीस सूत्री कार्यक्रम में कुछ काम पूरे हो गए थे तथा कुछ कार्यक्रमों में समय की आवश्यकता के अनुसार परिवर्तन जरूरी हो गया था। पिछले कार्यक्रम में मध्यम वर्ग को राहत देने के लिए आयकर छूट की सीमा आठ हजार रुपये तय की गई थी। यह छूट इस समय 15 हजार रुपये तक है। इससे मध्यम वर्ग के लाखों करदाताओं को राहत मिली। मोटर परिवहन के राष्ट्रीय परमिट की योजना, 50 लाख एकड़ में सिंचाई की व्यवस्था करना, बंधुआ मजदूरी समाप्त करना, ताप बिजलीघरों की स्थापना, ग्रामीणों की साहूकारी ऋण से मुक्ति आदि ऐसे कार्यक्रम हैं जिन्हें पूरा किया जा चुका है। कुछ कार्यक्रम अभी चल रहे हैं।

प्रधानमंत्री ने अपने नवीन कार्यकाल के दो वर्ष पूरे होते ही नए बीस सूत्री कार्यक्रम की घोषणा की। इस कार्यक्रम में गांवों के उत्थान के लिए दो नए सूत्र रखे गए हैं। ये हैं सभी समस्याग्रस्त गांवों को पीने के पानी की सप्लाई तथा प्रत्येक गांव में बिजली पहुंचाना।

पुराने बीस सूत्रों में भूमिगत जल के उपयोग की एक राष्ट्रीय योजना तैयार की गई थी। इसके लिए एक राष्ट्रीय आयोग भी गठित हुआ। इस दिशा में हुई प्रगति के आधार पर अब गांव-गांव में पीने के पानी की व्यवस्था का कठिन लेकिन अनिवार्य काम पूरा करने का विश्वास इस नए बीस सूत्री कार्यक्रम में दिखाई देता है।

देश में बिजली उत्पादन में काफी प्रगति हुई है। नये विशाल ताप बिजलीघरों का निर्माण कार्य जोरों से चल रहा है अब गांव-गांव में बिजली सप्लाई जल्दी संभव हो सकेगी। संशोधित बीस सूत्रों में बिजली उत्पादन बढ़ाने और बिजली अधिकरणों के कार्य में सुधार की ओर भी ध्यान दिया गया है।

देश भर में बंधुआ मजदूरों का पता लगाकर उनको गुलामी से मुक्त किया गया। बंधुआ मजदूर प्रथा को गैर कानूनी घोषित किया गया। नए कार्यक्रम में मुक्त बंधुआ मजदूरों को ठीक से पुनर्स्थापित करने का कार्यक्रम शामिल करके सरकार ने स्पष्ट कर दिया है कि वह उन मजदूरों की रोटी-रोजी की समस्या के प्रति उदासीन नहीं है।

नए बीस सूत्री कार्यक्रम में सार्वजनिक उद्योगों के कार्य में सुधार लाने का नया सूत्र जोड़ा गया है। ये सुधार कार्य-निपुणता बढ़ाकर क्षमता के अधिकतम उपयोग तथा आन्तरिक साधन बढ़ाकर संभव होंगे। सार्वजनिक उद्योग पिछले कुछ वर्षों में घाटे के कारण आलोचना के शिकार रहे हैं। हाल में इन उद्योगों में सुधार होकर लाभ की स्थिति बनने लगी है।

1975 में बीस सूत्रों के अतिरिक्त स्वर्गीय संजय गांधी का पांच सूत्री कार्यक्रम भी प्रारम्भ हुआ था। नए बीस सूत्रों में इनमें से दो को शामिल किया गया है। परिवार नियोजन संजय गांधी के पांच सूत्रों में शामिल था। इसमें अति उत्साह तथा जानबूझकर फैलाई गई कुछ भ्रांतियों के कारण एक अच्छे तथा सर्वोच्च प्राथमिकता वाले कार्यक्रम को जन रोष का शिकार होना पड़ा था। नए कार्यक्रम में परिवार नियोजन को स्वैच्छिक आधार पर तथा जन-आन्दोलन के रूप में आगे बढ़ाने का संकल्प लिया गया है। पांच सूत्री कार्यक्रम के पेड़ लगाओ आन्दोलन को भी नए बीस सूत्रों में शामिल किया गया है। नए कार्यक्रम के अनुसार वनों के विस्तार की ओर विशेष ध्यान दिया जाएगा।

पिछले कार्यक्रम में आवश्यक उपभोक्ता वस्तुओं की कीमतों को नीचे लाना, उत्पादन, वसूली तथा वितरण को नियंत्रित करना शामिल था। नए कार्यक्रम में उचित मूल्य की दुकानों द्वारा सार्वजनिक वितरण व्यवस्था का विस्तार शामिल है। इसके अन्तर्गत दूर-दूर के क्षेत्रों में वाहनों द्वारा आवश्यक उपभोक्ता वस्तुएं पहुंचाना भी शामिल है। स्कूल के छात्रों को उचित मूल्य पर किताबें-कापियां देने का कार्यक्रम भी इसी सूत्र में शामिल कर लिया गया है। इस सूत्र में प्रमुख बात है--

देश में एक मजबूत उपभोक्ता सुरक्षा आंदोलन को आगे बढ़ाना । इस वर्ष फसल अच्छी हुई है । किसी भी वस्तु के अभाव की स्थिति नहीं है । थोक मूल्यों में गिरावट आई है, मुद्रास्फीति कम हुई है । किन्तु इस सुधार का लाभ उपभोक्ता को तथा साधारण जनता को तभी पहुंच सकेगा जब खुदरा मूल्य नीचे आएंगे । सरकार की ओर से कई बार स्वीकार किया गया है कि थोक मूल्यों में कमी का प्रभाव खुदरा मूल्य पर नहीं दिखाई दे रहा है । यह सूत्र उसी हालत में सफल कहा जा सकेगा जब खुदरा मूल्यों में कमी आए और आम उपभोक्ता को राहत मिले ।

50 लाख एकड़ भूमि में अतिरिक्त सिंचाई व्यवस्था का लक्ष्य पूरा हो गया है । नए सूत्र में सिंचाई क्षमता को बढ़ाने के साथ-साथ असिंचित भूमि के लिए तकनीक और यंत्रों के विकास को शामिल करना है जो उन किसानों के लिए एक बड़ी आशा का संदेश लिए हुए है जिनकी अभी कुछ वर्षों तक सिंचित क्षेत्र में आने की संभावना नहीं दिखाई दे रही थी । दालें और खाने के तेलों के अभाव तथा भारी भरकम मूल्यों से पिछले वर्षों जन-साधारण को परेशानियों का सामना करना पड़ा था । दालों तथा तिलहनों के उत्पादन के लिए विशेष प्रयास का कार्यक्रम शामिल किया जाना इस कठिनाई से स्थायी राहत दे सकेगा । भूमि सुधार कार्यक्रमों में तेजी, खेतिहर मजदूरों के लिए न्यूनतम वेतन की व्यवस्था को प्रभावी ढंग से लागू करना, ग्रामीणों को मकान के लिए जमीन देना, प्राथमिक चिकित्सा केन्द्रों का विस्तार, कोढ़, तपेदिक तथा अंधेपन की बीमारियों पर नियंत्रण भी इस संशोधित कार्यक्रम में शामिल है ।

महिलाओं और बच्चों के कल्याण कार्यक्रम को आगे बढ़ाना विशेषकर आदिवासी पर्वतीय तथा पिछड़े क्षेत्रों में गर्भवती महिलाओं, जच्चाओं तथा बच्चों को पौष्टिक आहार के कार्यक्रम एक ऐसी मानवीय आवश्यकता को पूरा करेंगे जिसके अभाव में ग्रामीण जीवन काफी दुखी और त्रस्त रहा है । बच्चों को प्राथमिक शिक्षा हमारे संविधान के निदेशक सिद्धांतों का महत्वपूर्ण अंग है । नए कार्यक्रम में इसे पूरा करने का विशेष सूत्र शामिल किया गया है । 6 साल से 14 साल के बच्चों विशेषकर लड़कियों में प्राथमिक शिक्षा का प्रसार तथा छात्रों और स्वैच्छिक संस्थाओं के सहयोग से प्रौढ़ शिक्षा का विस्तार भी इस कार्यक्रम में सम्मिलित किया गया है ।

आज हमारी अर्थव्यवस्था सुधर रही है । सभी चीजों जैसे कोयला, इस्पात, बिजली, सीमेंट, खाद, खनिज तेल आदि का उत्पादन बढ़ा है । प्रधानमंत्री का ठीक ही दावा है कि अर्थव्यवस्था अब 1976-77 की तरह सबल बन गई है । योजनाएं और कार्यक्रम आम लोगों के जीवन में सुधार लाने के लिए बनाए गए हैं । आज हमारी जिम्मेदारी है कि हम लाखों करोड़ों लोगों के उत्थान के लिए जो सुधार हो रहे हैं उन्हें और आगे बढ़ाएं ।

प्रधानमंत्री ने इस वर्ष को उत्पादन वर्ष घोषित किया है । प्रधानमंत्री का संशोधित बीस सूत्री आर्थिक-सामाजिक कार्यक्रम देश में उत्पादन बढ़ाने और आर्थिक स्थिति को अधिक मजबूत तथा निश्चित दिशा दिलाने में निश्चित रूप से प्रकाश स्तम्भ सिद्ध होगा । □

विज्ञान की देन

कचरे की ढेरी
नाक को
सड़ाती है
दुनिया उस पर
नाक भौं चढ़ाती है
कचरे का ढेर
आफत का फेर
नगरपालिका को हिलाता है
गाली की कड़वी घूंट उसे पिलाता है
बदबू-महामारी फैलाता है
पर वाह रे विज्ञान !
तूने टेढ़े को कर दिया सीधा
कचरे को पीट अपने
बेलन से
बनाई बढ़िया खाद
बढ़िया गैस
खाद खेतों के लिए
गैस चूल्हों के लिए
घर में उजाले के लिए
धन्य है तू विज्ञान !
मिटाया तूने अवगुण
कचरे का
डाल दी उसमें नई
निराली जान
निरर्थक को
कर दिया सार्थक
पीतल को कर
दिया सोना ।

प्रकाशवती सिंह,
सी 2126 ए,
लारेंस रोड,
दिल्ली-110035

राजस्थान में ग्रामीण-विकास में प्रभावी प्रबन्ध का अभाव

आर० के० दीक्षित

राजस्थान भारत का एक विकासशील राज्य है। क्षेत्रफल की दृष्टि से राजस्थान का स्थान भारत में दूसरा है। यहां का क्षेत्रफल 3,42,214 किलोमीटर है, जोकि सम्पूर्ण भारत का 10.4 प्रतिशत है। राज्य की जनसंख्या सम्पूर्ण देश की 4.5% है। राजस्थान का निर्माण 19 बड़ी रियासतों तथा तीन ठिकानों को मिलाकर किया गया। राजस्थान भारत के पिछड़े हुए राज्यों में से एक है। राज्य में मध्यवर्ती अरावली पर्वतीय क्षेत्र, थार का मरुस्थल (पश्चिमी राजस्थान) तथा पूर्वी आदिवासी क्षेत्र क्रमश: भौगोलिक जलवायु तथा सामाजिक दृष्टि से पिछड़े क्षेत्र हैं। औद्योगिक दृष्टि से राज्य के 26 जिलों में से 16 जिलों को जालोर, नागौर, जोधपुर, चुरु, सीकर, झालावाड़, टौंक, अलवर, सिरोही, उदयपुर, बांसवाड़ा, झुंझनूं, जैसलमेर व बाड़मेर आदि को पिछड़ा हुआ घोषित किया गया है। राजस्थान की अरावली तथा विन्ध्याचल पर्वतमालाओं में अनुसूचित जनजातियों की कहीं तो घनी और कहीं बिखरी हुई जनसंख्या पाई जाती है। अरावली के पश्चिम और उत्तर पश्चिम का प्रदेश बालू से भरा हुआ है। इस प्रदेश का पूर्वी भाग मारवाड़ और पश्चिमी भाग थार का रेगिस्तान कहा जाता है। यहां पर वर्षा 25 सें० मी० से भी कम होती है। अत्यधिक वाष्पीकरण, ऊंचा तापक्रम तथा वनस्पति की कमी है। यातायात के साधनों का भी नितान्त अभाव है। इसी प्रकार पूर्वी राजस्थान विशेषत: सवाई माधोपुर, भरतपुर, पूर्वी जयपुर तथा उत्तरी कोटा आदिवासी क्षेत्र हैं। यहां भी कृषि योग्य भूमि कम है तथा चम्बल और उसकी नदियों के अत्यधिक बड़े बीहड़ हैं। इस प्रकार लगभग सम्पूर्ण राजस्थान एक पिछड़ा हुआ प्रान्त है।

पिछले तीस वर्षों से आर्थिक विकास भारत में हुआ भी, परन्तु वह आर्थिक विकास गुणात्मक तथा संख्यात्मक दोनों ही दृष्टियों से देश के अनुकूल नहीं रहा। आर्थिक विकास की दौड़ में शहर गांवों से, बड़े उद्योग छोटे उद्योगों से, उद्योग कृषि से, बाजी मार ले गए। इसके अतिरिक्त सम्पूर्ण देश का असंतुलित विकास हुआ। जहां कुछ राज्यों के विकास की दर ऊंची थी वहीं राजस्थान सहित कई राज्य पिछड़े रहे। वास्तव में पिछली योजनाओं की सफलता और असफलताओं ने देश के सामने चार वास्तविकताएं बिल्कुल स्पष्ट कर दी हैं और इनको हम भावी विकास योजनाओं में पढ़ने नजर अन्दाज नहीं कर सकते हैं। यह है—पहली, भारतीय अर्थव्यवस्था का कृषि प्रधान होना तथा कृषि का समुचित विकास न हो पाना। दूसरी, तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या। तीसरी असमानताएं तथा चौथी, अभावग्रस्तता से लेकर निपट गरीबी की स्थिति जिसमें देश की लगभग आधी जनसंख्या रह रही है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि किसी भी विकास कार्यक्रम को सफल बनाने के लिए हमें इन चारों पर करारी चोट करनी है। सिर्फ उत्पादन के आंकड़ों को ही विकास की एकमात्र कसौटी मानने वालों के पास सचमुच सबूतों की कोई कमी नहीं है। कुल राष्ट्रीय उत्पादन में बढ़ोतरी से लेकर मोटरकार, टेलीफोन, टेलीविजन सेटों, रेफ्रिजरेटर आदि की बढ़ती खपत, अंग्रेजी माध्यम के स्कूलों में जाने वाले बच्चों की बढ़ती संख्या आदि के ताने-बाने से निश्चित रूप से आर्थिक विकास का खूबसूरत और आकर्षक चित्र प्रस्तुत किया जा सकता है। नए-नए रंगों, शब्दों, शैलियों आदि से देश में हो रही आर्थिक प्रगति की लुभावनी तस्वीरें खींची जा सकती हैं, परन्तु क्या हमारी वास्तविक तस्वीर ऐसी है? नहीं कदापि नहीं। हर बार असलियत खुलकर हमारे सामने आती रही है।

परन्तु प्रश्न यह है कि यह असलियत क्या है? यह है देश की बहुत बड़ी आबादी वाले हिस्से की लगातार बढ़ती हुई गरीबी और अभाव की स्थिति, बेरोजगारों की तादाद में निरन्तर वृद्धि। देश की अधिकांश दौलत का मुट्ठी भर लोगों के पास जमा होना। एक ओर जिन्दगी की निहायत जरूरतों को पूरा करने तक असमर्थ, गरीबी के दल-दल में फंसे लोग, और दूसरी तरफ आधुनिक ऐश्वर्य के गगनचुम्बी शिखर। क्या यह हमारे राष्ट्रीय जीवन की सच्चाई है?

प्रश्न यह है कि लोक कल्याणकारी राज्य, समाजवादी समाज, सामाजिक-आर्थिक समता की लगातार होने वाली घोषणाओं के बावजूद यह सब क्या, क्यों और कैसे हुआ? इसका उत्तर है हमारी नीतियों के गलत होने से हमारी कथनी और करनी में अन्तर होने तक। तीस वर्षों में नारे कुछ भी लगते रहे हों, परन्तु विकास का हाथ एक विशेष वर्ग को ही मिला। धीरे-धीरे गांव टूट-टूटकर शहरों से जुड़ने लगे। गरीबी बेकारी से पीड़ित लोग शहरों का मुंह देखने लगे, जिसका परिणाम होने लगा है गांवों का विनाश और शहरों की

कठिनाइयों में वृद्धि। जिस प्रकार एक महल को वहां से खतरा है, जहां उसकी सबसे कमजोर दीवार है, उसी प्रकार हमें भी हमारी अर्थव्यवस्था में सबसे ज्यादा खतरा इसी कमजोर दीवार से है जो कभी भी गिर सकती है। इसके लिए हमें सच्चे मन से ग्राम विकास करना होगा। राजस्थान के संदर्भ में तो यह बात और भी गहरी होती जाती है।

अब पुनः प्रश्न पैदा होता है कि ग्राम विकास कैसे किया जाए ? ग्रामीण विकास की दिशा में राजस्थान में जो प्रयास किए गए हैं उनमें पंचायती राज की स्थापना, जिसके अन्तर्गत जिला परिषदों, पंचायत समितियों व ग्राम पंचायतों की स्थापना प्रमुख है। पंचायती राज ने जहां एक ओर राजनैतिक वैमनस्यता पैदा करके सम्पूर्ण ग्रामीण ढांचे को छिन्न-भिन्न कर दिया है, वहीं पंचायत समितियां राजनैतिक अखाड़ा मात्र बनकर रह गई हैं। जहां तक ब्लाक डवलपमेंट कार्यों का प्रश्न है, यह सब कागजों पर सिमट कर रह गया है। इसके बाद गांवों के विकास के लिए कुछ विशिष्ट योजनाएं भी बनाई गईं, जो कुछ क्षेत्रों तक सीमित रहीं। डी०पी०ए०पी०, सफूड़ा, मफाल, केड लीड बैंक योजना, अन्त्योदय योजना और राजस्व अभियान आदि ये सभी योजनाएं सभी गांवों को लाभान्वित नहीं कर सकी हैं। इनमें से कुछ योजनाएं जैसे अन्त्योदय तथा राजस्व अभियान योजनाओं के बारे में निश्चित रूप से कुछ भी नहीं कहा जा सकता है क्योंकि इन्हे लागू किए हुए कुछ समय ही हुआ है। अल्पकाल में इनके बारे में कुछ भी कह सकना मुश्किल है।

गांवों के विकास के लिए हमें गांवों का इन्फ्रास्ट्रक्चर (संरचना आधार) तैयार करना होगा। इसके लिए गांवों में बिजली, सड़क, पानी आदि की व्यवस्था करनी होगी। यदि इन तीनों कार्यों को हम ईमानदारी से कर लें तो हमारे गांवों की काफी समस्या हल हो सकती है। परन्तु दुर्भाग्य यह है कि गांवों में कार्य भी किया जा रहा है, परन्तु इन कार्यों में जितना भ्रष्टाचार है, उसकी कल्पना नहीं की जा सकती। बिजली किन गांवों से होकर जाएगी, खम्बे कहां-कहां लगाए जाएंगे, सड़क कहां से निकलेगी, नहर, तालाब या बांध का निर्माण कहां होगा, इसमें गरीब किसान को सामान्यतः कोई लाभ नहीं होता अपितु उसे सरकारी मशीनरी द्वारा अनावश्यक परेशान किया जाता है।

इससे पहले हम देख ही चुके हैं कि भूमि सुधारों के नाम पर क्या हुआ है। स्कूल, चिकित्सालय आदि की बात ही छोड़ दीजिए। स्कूल, चिकित्सालय आदि यदि राजनैतिक दबाव के कारण खोल भी दिए गए हैं तो वहां पर अध्यापक और चिकित्सक ही नहीं हैं और यदि वे उपलब्ध हैं तो चाक, बोर्ड तथा दवाइयां नहीं हैं। यदि इन बातों की ओर हम ध्यान दें तो संभवतः हमारे गांवों का विघटन नहीं होगा और यह विघटन रोकना शहर वालों के भी हित में है। क्योंकि प्राथमिक उत्पादन गांवों में होता है। इसके अतिरिक्त गांवों का दबाव शहरों की ओर बढ़ गया तो शहर का अमन-चैन भी नहीं रह पाएगा। इसीलिए शहर वालों को गांवों के विकास की बात कहकर एहसान नहीं थोपना चाहिए। यह सब राष्ट्रीय हित में है।

गांवों का विकास कृषि, कुटीर-उद्योग और छोटे उद्योगों में निहित है तथा कृषि, कुटीर-उद्योग तथा छोटे उद्योग तभी गांवों में विकसित हो सकते हैं जबकि गांवों की प्राथमिक आवश्यकताएं पूरी की जाएं। कृषि विकास के लिए जहां एक ओर भूमि सुधारों को मजबूती से लागू करने की जरूरत है वहीं दूसरी ओर इसके यंत्रीकरण की जरूरत है परन्तु इसके लिए न पैसा है न तकनीकी ज्ञान। ये दोनों ही हमें उपलब्ध कराने होंगे। किसानों को कम ब्याज दर पर बिना अधिक परेशान किए ऋण दिलाने होंगे तथा ऐसी छोटी वर्कशाप स्थापित की जानी होंगी जो किसानों को तकनीकी ज्ञान दे तथा उनकी कमियों को दूर कर सके। कुटीर तथा लघु उद्योगों के लिए हमें गांवों में कच्चा माल, धन, तकनीकी तथा बिजली आदि की व्यवस्था करनी होगी। गांवों में श्रम काफी मात्रा में है, ऐसा करके न केवल हम बेरोजगारी को दूर कर पाएंगे बल्कि अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति भी हम कर सकेंगे और गांवों का शहरों की ओर उड़ना भी बंद कर सकेंगे। कृषि विकास के साथ उसके सहायक उद्योग जैसे पशुपालन, मत्स्य पालन, आदि पर भी ध्यान देना होगा। इसके लिए चारे की व्यवस्था करनी होगी। अच्छी पशुशालाओं का निर्माण करना होगा, पशुओं की बीमारी के लिए उचित व्यवस्था करनी होगी। इससे भी हमारी ग्रामीण अर्थव्यवस्था सुदृढ़ होगी। डेयरी उद्योग तथा चमड़ा उद्योग को भी इसके साथ-साथ पनपाया जा सकेगा।

हमारे पास योजनाएं भी हैं, साधन भी हैं, परन्तु जरूरत ईमानदारी से कार्य करने की है। जिस समय हम गांवों के विकास का प्रबन्ध ठीक ढंग से करना सीख लेंगे, उस समय हमारी ग्रामीण समस्याएं शत प्रतिशत हल हो जाएंगी। □

छोटा परिवार सुखी परिवार

व्यावहारिक पुष्टाहार कार्यक्रम की नई दिशाएं

बटुकेश्वर दत्त सिंह 'बटुक'

व्यावहारिक पुष्टाहार कार्यक्रम बच्चों के स्वास्थ्य के स्तर को ऊंचा उठाने हेतु जन सहयोग द्वारा केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकारों तथा विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं की ओर से चलाए जाने वाले उन अनेक कार्यक्रमों में से एक प्रमुख कार्यक्रम रहा है, जो बच्चों को उपयुक्त शारीरिक, मानसिक और सामाजिक विकास के अवसर उपलब्ध कराते हैं। वस्तुतः इस कल्याण कार्यक्रम का केन्द्र बिन्दु बच्चा है। आज के बच्चे ही देश के भावी नागरिक बनते हैं, अतः व्यावहारिक पुष्टाहार कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य बच्चों को कुपोषण के कुप्रभावों से बचाकर उनके स्वास्थ्य में सर्वतोमुखी विकास करना रहा है।

किसी शिशु का स्वास्थ्य उसे जन्म देने वाली माता के स्वास्थ्य पर निर्भर होता है। एक स्वस्थ मां ही स्वस्थ शिशु को जन्म दे सकती है। यही नहीं मानव शिशु अपने शैशवकाल में पूर्ण रूप से अपनी मां के स्तनपान पर निर्भर करता है। साथ ही भारतीय पारिवारिक जीवन में मां ही बच्चे के पालन-पोषण का उत्तरदायित्व निभाती है। यही कारण है कि जन्म से छः वर्ष तक की अवधि के बच्चों तथा गर्भवती व स्तनपान कराने वाली माताओं के स्वास्थ्य के स्तर को ऊंचा उठाने के साथ 15 से 45 वर्ष की आयु की महिलाओं को बच्चों के सर्वाङ्गीण विकास का ज्ञान कराने, परिवार की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति करने हेतु कला-कौशल में दक्षता बढ़ाने के अवसर प्रदान करने तथा उन्हें सामाजिक रूप से सुसंगठित कर अपने विकास के लिए सक्रिय करना छठी पंचवर्षीय योजना की रणनीति को ध्यान में रखते हुए व्यावहारिक पुष्टाहार कार्यक्रम का उद्देश्य माना गया है।

कार्यक्रम की नई दिशाएं :—छठी पंचवर्षीय योजना के प्रथम वर्ष 1980–81 के उपरान्त व्यावहारिक पुष्टाहार कार्यक्रम हेतु मिलती आ रही "यूनीसेफ" की सहायता समाप्त हो गई। अतः यह कार्यक्रम वर्ष 1981-82 से पूर्णरूपेण राज्यों के संसाधनों से संचालित किया जा रहा है। नवीन परिप्रेक्ष्य में इस कल्याणकारी कार्यक्रम की अधोलिखित दिशाएं स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप निर्धारित करना सभी के लिए स्वास्थ्य तथा ग्राम्य विकास के लिए आधारभूत सेवाएं प्रदान करने में विशेष उपयोगी सिद्ध होगा।

1. अच्छे स्वास्थ्य की मूलभूत आवश्यकताओं में पौष्टिक भोजन, शुद्ध पेय-जल और स्वच्छ वातावरण आते हैं। गरीबी की रेखा से नीचे आने वाले परिवारों के बच्चों तथा गर्भवती व धात्री माताओं को पौष्टिक भोजन सुलभ कराने हेतु शाक, सब्जी, फल, अण्डा, दुग्ध आदि की उत्पादन इकाइयां उनके द्वारा स्थापित कराई जाएं। छठी पंचवर्षीय योजनान्तर्गत गरीबी की रेखा के नीचे के परिवारों और अनुसूचित जाति व जनजाति के परिवारों को ही व्यावहारिक पुष्टाहार कार्यक्रम में सहायता दी जानी है, अतः पौष्टिक आहार उपलब्ध कराने के निमित्त गृहवाटिकाओं में शाक-सब्जी उत्पादन, फलवृक्ष लगाने तथा पशुपालन के अन्तर्गत केवल छोटे पशु-पक्षी यथा भेड़, बकरी, सूकर, कुक्कुट आदि को पालने की इकाइयों की स्थापना हेतु सहायता सुलभ करानी होगी। ग्राम्य विकास कार्यक्रमों के अन्तर्गत प्रत्येक गांव में शुद्ध पेयजल की व्यवस्था को प्राथमिकता देकर पूर्ण किया जा रहा है। अतः जिन बालवाड़ी केन्द्रों के समीप हैण्ड-पम्प लगाना संभव हो वहां अवश्य लगवाए जाएं और इसके लिए पूरी सहायता प्रदान की जाए। शुद्ध पेय-जल की व्यवस्था प्रत्येक पूरक आहार प्रदर्शन एवं वितरण स्थल के निकट होनी अनिवार्य है। योजनान्तर्गत लक्षित परिवारों में व्यक्तिगत तथा वातावरणीय स्वच्छता की शिक्षा प्रदान करने के साथ-साथ स्वच्छ शौचालयों, भोजन सुरक्षिकाओं आदि के निर्माण हेतु उपयुक्त सहायता दी जाए।

2. प्रत्येक गांव की आंगनवाड़ी/बालवाड़ी में बच्चों, गर्भवती व धात्री माताओं को पूरक आहार वितरण की व्यवस्था के साथ उसे सुधरे हुए ढंग से पकाने का प्रदर्शन भी दिया जाए, जिससे वहां के परिवारों में सस्ते पौष्टिक व्यञ्जनों का प्रचार व प्रसार हो और लोग अपने भोजन में वांछित परिवर्तन लाकर अपने स्वास्थ्य के स्तर में सुधार ला सकें।

3. बच्चों के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं भावनात्मक विकास के अवसर उपलब्ध कराने में बालवाड़ी का अपना विशिष्ट स्थान होता है। अतः व्यावहारिक पुष्टाहार कार्यक्रम वाले प्रत्येक विकास खण्ड के गांवों में बालवाड़ी चलाई जाए तथा ऐसी व्यवस्था की जाए कि उनका निरन्तर संचालन होता रहे। ऐतदर्थ शासकीय कार्यक्रमों के अतिरिक्त किसी स्थानीय समाजसेवी महिला को इस हेतु आवश्यक प्रशिक्षण देकर तैयार किया जाए। ऐसी प्रशिक्षित महिलाएं कार्यक्रम के कार्यकाल की अवधि समाप्त हो जाने तथा ग्राम सेविका की सेवाएं हटा लिए जाने पर भी बालवाड़ी का संचालन करती रहेंगी। उन्हें उनके इस कार्य के लिए यथोचित मानदेय दिए जाने की व्यवस्था होनी चाहिए।

4. ग्रामीण अञ्चलों की महिलाओं में सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक जागरुकता लाने की दिशा में महिला मण्डलों की स्थापना का विशिष्ट महत्व है। गांवों के महिला मण्डल, युवती मंगल दल जैसे सहयोगी संगठनों के माध्यम से व्यावहारिक पुष्टाहार कार्यक्रम के शिक्षण-प्रशिक्षण, उत्पादन, प्रदर्शन, पूरक आहार वितरण आदि सभी कार्यक्रमों के प्रभावी संचालन में सहायता मिलती है। योजनान्तर्गत आने वाले विकास खण्डों के गांवों में महिला मण्डलों का संगठन करके उन्हें क्रियाशील बनाए रखा जाए। इन महिला संगठनों की सदस्याएं मुख्यतः गरीबी की रेखा से नीचे आने वाले परिवारों और अनुसूचित जाति व जनजाति के परिवारों से हों। सदस्याओं को सामाजिक तथा सांस्कृतिक कार्यक्रमों में सहभागी बनाने के साथ उन्हें ऐसे आर्थिक कार्यकलापों में लगाया जाए, जिनसे ग्रामीण महिलाएं सामूहिक प्रयास द्वारा अपने परिवार के आर्थिक स्तर को ऊंचा कर सकें। आर्थिक स्तर बढ़ने पर उनके रहन-सहन का स्तर ऊंचा होगा और वे अपने बच्चों तथा परिवार के अन्य जरूरतमन्द सदस्यों को उपयुक्त पौष्टिक एवं सन्तुलित आहार उपलब्ध करा सकेंगी। वे समाज में अपना वांछित स्थान स्वयं निर्धारित करने में सक्षम होंगी। महिलाओं की आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्थिति में परिवर्तन आने पर उनके परिवारों के साथ सम्पूर्ण ग्रामीण समुदाय में परिवर्तन आएगा। गांवों में स्थापित महिला मण्डलों के माध्यम से ही किसी गांव के जरूरतमन्द बच्चों के लिए बालवाड़ी चलाने और पूरक आहार-वितरण आदि कार्यों की व्यवस्था कराई जाए। स्थानीय महिलाओं की सहभागिता एवं सहयोग प्राप्त करके ही ऐसे कल्याणकारी कार्यक्रम प्रभावी रूप से सम्पादित किए जा सकेंगे। इन महिला मण्डलों द्वारा गांव की उपेक्षित महिलाओं में आत्मविश्वास, स्वावलम्बन, सहयोग तथा नेतृत्व की भावनाओं का विकास होगा।

5. ग्रामवासियों में पुष्टाहार के स्तर को ऊंचा उठाने की दृष्टि से व्यावहारिक पुष्टाहार कार्यक्रम के अन्तर्गत विशेष रूप से 15 से 45 वर्ष आयु वर्ग की महिलाओं को पुष्टाहार की शिक्षा देने की सुविधा ग्राम स्तर पर सुलभ करानी होगी। इसके लिए स्थानीय रूप से उपलब्ध सस्ते एवं पौष्टिक खाद्य पदार्थों द्वारा बच्चों तथा गर्भवती व धात्री माताओं के लिए पूरक आहार तैयार कराने के व्यावहारिक प्रदर्शन आयोजित किए जाएं। उन्हें उनके आर्थिक कार्यकलापों और कला कौशलों में दक्षता दिलाने हेतु स्थानीय तथा संस्थागत प्रशिक्षण प्रदान किए जाने की पर्याप्त व्यवस्था सुनिश्चित की जाए।

6. गृहणियों को अपने परिवार की देखभाल करने में सक्षम बनाने के लिए यह आवश्यक होगा कि विशेष रूप से 15 से 45 वर्ष आयु वर्ग की माताओं अथवा भावी माताओं को बच्चों के लालन-पालन, आहार व्यवस्था, स्वास्थ्य रक्षा, रोगों से बचाव के टीके, वस्त्र, व्यायाम, शिक्षा, मनोरंजन, स्वच्छता तथा गर्भवती एवं धात्री स्त्रियों के आहार, व्यायाम, जच्चा-बच्चा की तैयारी, परिवार कल्याण नियोजन आदि की शिक्षा का विस्तृत रूप से योजनान्तर्गत लिए गए ग्रामों में प्रसार किया जाए। इस हेतु व्यावहारिक पुष्टाहार कार्यक्रम में स्वास्थ्य एवं परिवार नियोजन विभाग के कार्यकर्त्ताओं को ग्राम-स्तर पर विशेष योगदान देना होगा। अतः योजनान्तर्गत आने वाले विकास खण्डों में ग्राम्य विकास विभाग के कार्यकर्त्ताओं तथा प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र के कार्यकर्त्ताओं में पूर्ण समन्वय तथा सहयोग अपेक्षित होगा।

7. व्यावहारिक पुष्टाहार कार्यक्रम के अन्तर्गत उत्पादन तथा आर्थिक कार्यकलापों के क्षेत्र में उद्यान एवं पशुपालन विभागों के साथ समन्वय करने के साथ-साथ खादी एवं ग्रामोद्योग संस्था के साथ समन्वय स्थापित कर ग्रामीण महिलाओं हेतु उपयुक्त परियोजनाएं बनवाकर उनके प्रभावी क्रियान्वयन में संबंधित सभी पक्षों का सक्रिय योगदान प्राप्त किया जाएगा। अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति के लक्षित परिवारों से सम्बद्ध महिलाओं को ऐसी उत्पादन इकाइयों की स्थापना में विशेष आर्थिक सहायता देनी होगी और इसका निश्चय करना होगा कि आगे चल कर ये इकाइयां स्वावलम्बी बन जाएं।

निश्चयात्मक रूप से व्यावहारिक पुष्टाहार कार्यक्रम के उद्देश्यों में पुष्टाहार शिक्षा प्रदान करने को प्राथमिकता देनी होगी, तभी ग्रामीण जनमानस में अच्छे स्वास्थ्य के लिए पौष्टिक एवं सन्तुलित आहार के उत्पादन एवं उसके उपभोग को बढ़ावा देने की आवश्यकता का बोध हो सकेगा। ग्रामीण क्षेत्रों में व्याप्त अज्ञान, रूढ़िवादिता, अन्धविश्वास, गरीबी, बेरोजगारी आदि को दूर करके ही वहां के जन-जीवन को स्वस्थ, सुखी एवं सम्पन्न बनाया जा सकता है। अतः ग्राम्य विकास के लिए ग्रामवासियों को आधारभूत सेवाएं सुलभ कराना व्यावहारिक पुष्टाहार योजनान्तर्गत कार्यक्रमों का स्पष्ट उद्देश्य होना चाहिए। इसके लिए ग्रामीण समुदाय की सहभागिता एक अनिवार्य आवश्यकता है, जिसकी पूर्ति के लिए स्थानीय सामाजिक कार्यकर्त्ताओं एवं समाज कल्याण के कार्यों में लगी समस्त स्वयंसेवी संस्थाओं को आगे आकर हाथ बटाना होगा। □

बटुकेश्वर दत्त सिंह 'बटुक'
प्रसार प्रशिक्षण अधिकारी
प्रसार प्रशिक्षण केन्द्र, मैनपुरी (उ० प्र०)
पिन कोड-205001

एक व्यावहारिक कार्यक्रम

अधिक आमदनी के लिए मुर्गी पालन कैसे करें

विनय कुमार भटनागर

भारतीय किसान का नाम लेते ही आंखों के सामने अभावों से ग्रस्त, चिंताओं के कारण झुर्रियों से भरा चेहरा घूम जाता है। वह रात-दिन जी-तोड़ मेहनत करता है फिर भी भरोसा नहीं कि जितनी थोड़ी-बहुत जमीन है उससे पूरी उपज मिल पाएगी या नहीं, बीज का किसी तरह जुगाड़ करता है तो भरोसा नहीं कि समय पर इन्द्र देव की कृपा होगी या नहीं, धरती की प्यास बुझेगी या नहीं, खाद के नाम पर गोबर की खाद, महंगे उर्वरक खरीदने की हिम्मत कैसे करें, फिर फसल को खाने वाली कीट व्याधियां और महाजन।

इन सब कारणों से सिर्फ खेती से गुजारे के लायक पसा मिल सकता है। क्यों न किसान खेती के साथ-साथ कोई सहायक धंधा अपना ले जैसे मुर्गी पालन, डेयरी, या कोई अन्य कुटीर उद्योग। फसल का काम पूरे साल नहीं चल पाता, खाली समय में खेती के साथ-साथ किसान यदि कोई सहायक धंधा भी शुरू कर दे तो उसकी हालत में कुछ सुधार आ सकता है।

मुर्गीपालन एक ऐसा ही धंधा है। सही तौर पर मुर्गीपालन करने से 10 मुर्गियों से साल में कम से कम 1200 रुपये की आमदनी हो सकती है। पिछड़े और जनजाति क्षेत्रों में मुर्गीपालन को बढ़ावा दिया जा सकता है और किसानों को मुर्गीपालन के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है। इसके लिए जरूरी है कि विकास खंड स्थानीय तौर पर व्यावहारिक कार्यक्रम बनाएं जिनके जरिए गांव वालों को मुर्गीपालन का महत्व बताया जाए। यदि उन्हें यह पता चल जाए कि कम लागत में उन्हें अच्छी आमदनी हो सकती है तो वे मुर्गीपालन को अपना लेंगे।

ऐसा ही मुर्गीपालन का एक विस्तृत कार्यक्रम जिला ग्रामीण विकास अभिकरण छिंदवाड़ा (म० प्र०) द्वारा सफलतापूर्वक चलाया जा रहा है। राजकीय मुर्गीपालन प्रक्षेत्र इमली खेड़ा छिंदवाड़ा पर एक दिवसीय चूजे 15 दिनों तक पाल कर ट्राइसेम योजना के अन्तर्गत कुक्कुट प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे प्रशिक्षार्थियों को हस्तांतरित किए जाते हैं। इन चूजों को ग्रामीण पालते हैं, इनके अण्डों और कुड़क मुर्गी द्वारा सेकर बच्चे निकाले जाते हैं। इन्हें पालकर बाजार में बेच कर आमदनी बढ़ाई जाती है। इस कुक्कुटपालन योजना का विवरण यहां दिया जा रहा है।

छिंदवाड़ा जिले के आदिमजाति विकास खण्डों में जिला के पशु चिकित्सा एवं पशुपालन विभाग द्वारा गहन कुक्कट पालन योजना चलाई जा रही है। इसके अन्तर्गत ग्रामों का चुनाव कर चुने हुए आदिवासी परिवारों को 25 एक दिवसीय चूजे प्रदान किए जाते हैं। इन परिवारों को चूजों को खिलाने के लिए 10 कि० ग्रा० दाना विभाग द्वारा दिया जाता है। योजना का खर्च पशु चिकित्सा एवं पशु पालन विभाग उठाता है।

यह महसूस किया गया है कि जिले के आदिवासी ग्रामीण क्षेत्रों में आदिवासी परिवार मुर्गीपालन तो करते हैं परन्तु प्रति वर्ष बरसात प्रारम्भ होते ही खेतों में बोए गए दाने को बचाने एवं जंगली जानवरों से अपनी मुर्गी की हानि होने से पूर्व ही मुर्गी एवं मुर्गा छोड़कर शेष मुर्गियों को किसी भी कीमत पर बाजारों में बेच देते हैं।

माह अगस्त-सितम्बर में इन आदिवासियों के पास सिर्फ एक मुर्गा एवं एक मुर्गी ही देखी जा सकती है जिसे वे बाद में फसल, नस्ल बढ़ाने और बच्चे पालने के काम लाते हैं। मुर्गियों को सुरक्षा की दृष्टि से घर में ही रोक कर रखा जाता है।

बोई हुई फसल के बीज की हानि, जंगली पशुओं से आदिवासियों के कुक्कुट धन की रक्षा और बाजार में मुर्गी की कीमत नियंत्रित करने के लिए यह आवश्यक समझा जाता है कि गहन कुक्कुट पालन योजना में कुछ इस तरह संशोधन किया जाए कि किसान कुक्कुट धन को सुरक्षित रख सके और समय-समय पर आवश्यकतानुसार मुर्गी के 3–4 माह के बच्चे बाजार में बेच सके।

यह महसूस किया गया है कि यदि आदिवासी परिवारों अथवा गरीबी की रेखा के नीचे आने वाले अन्य परिवारों को जो मुर्गीपालन करते हैं और जो कुक्कुट मुर्गी से बच्चे निकालकर पालते हैं उनके लिए कुक्कुट पालन में इस सामयिक सुरक्षा की व्यवस्था की जाए तो ये परिवार अपनी आमदनी बढ़ा सकते हैं।

योजना का विवरण

इस योजना के अन्तर्गत गरीबी रेखा से नीचे ग्रामीण आदिवासी/गैर आदिवासी परिवार को कुक्कुट-पालन के लिए, उनके दड़बे बनाने के लिए सहायता दी जाती है। मुर्गियों के दड़बे कैसे हों इस बारे में उन्हें बताया जाता है।

दड़बे का स्वरुप

योजना के अन्तर्गत आदर्श दड़बा परिवार के घर की पूर्वी दीवार के सहारे या साथ-साथ 8 फुट × 10 फुट का तीन ओर जाली लगाकर घेरा बनवाया जाए। इसका उपयोग कुड़क मुर्गी अण्डे सेने के लिए बैठाने, चूजों को पालने, रात्रि में अधिक मुर्गियों को सुरक्षित रखने के लिए और फसल के मौसम में जंगली जानवरों से मुर्गे-मुर्गियों की रक्षा करने के लिए किया जाता है।

इसका प्राक्कलन इस प्रकार है 8 फुट × 10 फुट = 80 वर्ग फुट 6 रु० प्रति वर्ग फुट की दर से कुल लागत 480 रु० या 500 रु०। इसके निर्माण पर 500 रुपये से अधिक खर्च नहीं आएगा।

मुर्गी पालकों को प्रशिक्षण

जिला ग्रामीण विकास अभिकरण की ट्राइसेम योजना के अन्तर्गत मुर्गीपालकों को प्रशिक्षण दिया जाएगा। यह प्रशिक्षण 25 दिन का होगा।

प्रशिक्षण के बाद मुर्गी पालक गांव में कम से कम 3 अन्य इकाइयों की देखरेख करेगा।

यह प्रशिक्षण 20 अगस्त, 1981 से प्रारम्भ किया जा चुका है। अभी यह कुक्कुट पालन प्रक्षेत्र इमली खेड़ा में हो रहा है पर जरूरत पड़ने पर कुछ विकास खंड मुख्यालय पर प्रशिक्षित प्रशिक्षकों की उपलब्धि के अनुसार प्रशिक्षण शुरू किया जा सकता है।

हर परिवार से एक सदस्य प्रशिक्षण लेता है। सहायक संचालक, पशु चिकित्सा सेवा प्रशिक्षण लेने वालों को 25 चूजों की व्यवस्था करते हैं। इन चूजों को खिलाने के लिए 10 कि० ग्रा० दाने की व्यवस्था (पशु चिकित्सा विभाग द्वारा) की जाती है। एक महीने में प्रति चूजा 800 ग्राम दाने की दर से 25 चूजों के लिए 20 कि० ग्रा० दाना सुलभ होगा। प्रशिक्षण के बाद आदिवासी उप योजना क्षेत्र का प्रशिक्षार्थी एक महीने के चूजे नव-निर्मित कुक्कुट गृह में रखेगा। हर विकास खंड से 4 प्रशिक्षार्थी प्रशिक्षण के लिए भेजे जाएंगे। प्रशिक्षण की आयु 18 से 35 वर्ष के बीच होनी चाहिए। कुक्कुट पालन में उसकी रुचि हो और वह कुक्कुट पालन करना चाहता है। उसकी पारिवारिक आय 3,500 रु० से अधिक नहीं हो और उसके परिवार में 5 एकड़ से अधिक भूमि न हो। जाहिर है, इस योजना का उद्देश्य ऐसे लोगों को प्रशिक्षण देना है जो गरीबी की रेखा से नीचे हैं।

इस योजना के अनुसार मुर्गी का दड़बा बनाने पर 500 रु० का खर्च आता है। बिजली फिटिंग, फीडर और जरूरत पड़ने पर आपातकाल में बच्चे खरीदने के लिए 300 रुपये और कोल्डवुडर दवाइयों आदि के लिए 200 रु० का खर्च आता है।

पहले साल आदिवासी क्षेत्रों में 1,357 रुपये का और गैर-आदिवासी क्षेत्रों में 1,283 रुपये का कुल लाभ मिलता है। बैंक से लिए ऋण की किस्त ब्याज आदि के बाद आदिवासी क्षेत्र में 1171 रु० और गैर-आदिवासी क्षेत्रों में 1,036 रु० बचता है। इसी प्रकार दूसरे साल में आदिवासी क्षेत्रों में 1,264 रुपये और गैर-आदिवासी क्षेत्रों में 1193 रु० और तीसरे साल में आदिवासी क्षेत्र में 1,290 रु० और गैर-आदिवासी क्षेत्र में 1,202 रु० की बचत होती है।

इस तरह की योजनाएं यदि और जगह भी अपनाई जाएं और विकास खंड पशु चिकित्सा कर्मचारी मुर्गीपालकों को सलाह, और सुविधाएं दें, मुर्गीपालकों को सलाह, प्रशिक्षण और वित्तीय सहायता दी जाए, मुर्गीपालन को बढ़ावा देने के लिए इस तरह की व्यावहारिक योजनाएं बनें और उन पर अमल किया जाए तो जल्दी ही सहायक धंधे के रूप में मुर्गी-पालन लोकप्रिय हो सकता है। □

कमरा नं० 317
कृषि भवन, नई दिल्ली

हमारी सम्पदा हमारे वन

गांवों के युवकों को स्वरोजगार के लिए प्रशिक्षण

ट्राइसेम (गांवों के युवकों को स्वरोजगार के लिए प्रशिक्षण देने का कार्यक्रम) एक ऐसा कार्यक्रम है जिस पर गरीबी की रेखा से नीचे वाले एक करोड़ 15 लाख परिवारों की सहायतार्थ छठी योजना की अवधि में सरकार द्वारा 15 सौ करोड़ रुपये और वित्तीय संस्थाओं द्वारा 3 हजार करोड़ रुपये खर्च करने का इरादा है जिससे ये परिवार गरीबी की रेखा से ऊपर उठाए जा सकें। लक्ष्य तो बड़ा आकर्षक है परन्तु कार्यक्रम के क्रियान्वयन में विशेष सावधानी बरतने की आवश्यकता है।

समन्वित ग्राम विकास के कार्यक्रम के अन्तर्गत देश के 5 हजार विकास खण्डों में से हरेक में 600 गरीब परिवारों को छांटा जाएगा और हरेक परिवार को सरकार द्वारा सहायता दी जाएगी। हर परिवार को ऋण और अनुदान के रूप में सहायता दी जाएगी। इन चुने हुए परिवारों के 35 वर्ष की आयु से नीचे के युवकों को उद्योग धन्धों का प्रशिक्षण दिया जाएगा ताकि वे अपने-आप अपना रोजगार प्राप्त कर सकें। ये युवक छोटे किसान, सीमांत किसान, खेतिहर मजदूर तथा ग्रामीण दस्तकार परिवारों से सम्बन्धित होंगे।

इन श्रेणियों में आने वाले व्यक्तियों के बच्चे भी योजना का फायदा उठा सकते हैं। आरम्भ में एक परिवार में से एक ही सदस्य को चुना जा सकेगा।

चुनते समय महिलाओं और अनुसूचित जातियों व जन-जातियों के सदस्यों को प्राथमिकता दी जाएगी।

चुनाव कैसे होगा : चुनाव स्थानीय बी० डी० ओ० द्वारा किया जाएगा। अतः जो व्यक्ति योजना में भाग लेना चाहें, वे अपने बी० डी० ओ० से सम्पर्क स्थापित कर सकते हैं। चयन करने के लिए मुख्य आवश्यकता यह है कि योजना में निर्धारित शर्तों को पूरा करें।

यह बी० डी० ओ० की जिम्मेदारी होगी कि उपयुक्त रोजगार व्यक्ति के साथ मशविरा करके तय करें। रोजगार का चुनाव बहुत समझ-बूझ कर करना होगा। यह व्यक्ति की रुचि, जानकारी, कच्चे माल की सुविधा, तैयार वस्तुओं की बिक्री की सम्भावना आदि बातों को देखकर तय करना होगा।

सौभाग्य से कृषि, पशुपालन, बागवानी, लघु उद्योगों आदि क्षेत्रों में कई नए रोजगार के अवसर उभर रहे हैं। उदाहरण के लिए—अच्छी नस्ल की गाय पालना, मुर्गी पालना, मछली पालन, बागवानी, बीज उत्पादन, रेशम के कीड़े पालना, पम्प सैट और मशीनों की मरम्मत, रेडियो आदि की मरम्मत, बिस्कुट और डबल रोटी बनाना, कृत्रिम गर्भाधान के टीके लगाना, ब्लू-ग्रीन एल्गी पैदा करना, कुटीर उद्योग जैसे साबुन बनाना, लकड़ी, लोहे व मिट्टी का सामान, खिलौने बनाना, सिलाई, स्वेटर बुनाई, कसीदाकारी, कालीन बुनाई, फल एवं खाद्य संरक्षण, दियासलाई व अगरबत्ती बनाना, तेल घानी, चमड़े की वस्तुएं बनाना आदि। रोजगार ऐसा होना चाहिए जो गांव में चल सके। व्यक्ति की वस्तुओं या सेवाओं की मुख्यतः गांव में ही मांग होनी चाहिए। यदि बिक्री का सही इन्तजाम सरकारी, सहकारी अथवा निजी क्षेत्र की कोई एजेंसी कर रही हो और माल के खप जाने में कोई सन्देह न हो, तो बाहर की मांग वाली वस्तुएं भी तैयार की जा सकती हैं।

प्रशिक्षण कहां : रोजगार के चुनाव के बाद बी० डी० ओ० यह निश्चित करेंगे कि व्यक्ति का प्रशिक्षण कहां होना चाहिए। इसमें उनको जिला व राज्य स्तर से सहायता दी जाएगी। प्रशिक्षण किसी भी उपयुक्त संस्थान में दिया जा सकता है, चाहे वह केन्द्रीय या राज्य सरकार द्वारा चलाया जा रहा हो या किसी स्वैच्छिक निकाय द्वारा। उदाहरण के लिए—आई० टी० आई०, कृषि विज्ञान केन्द्र, कृषक प्रशिक्षण केन्द्र, ग्राम सेवक प्रशिक्षण केन्द्र, ग्राम सेविका प्रशिक्षण केन्द्र, कृषि विश्वविद्यालय, विभागीय प्रशिक्षण केन्द्र इत्यादि। इन संस्थानों को सुदृढ़ बनाने के लिए भी योजना में प्रावधान रखा गया है। इसके अतिरिक्त, प्रशिक्षण अच्छे कारीगरों व दस्तकारों, औद्योगिक इकाइयों, सेवा निकायों तथा व्यापारिक संस्थाओं द्वारा भी दिया जा सकता है।

खर्चा

व्यक्ति को प्रशिक्षण पर कोई खर्चा नहीं करना पड़ेगा। केन्द्र व राज्य सरकारें मिलकर प्रशिक्षण के खर्चे का बोझ उठा रही हैं। व्यक्ति के खानपान, ठहरने आदि के लिए प्रशिक्षण संस्थान को 100 रुपये प्रति मास दिया जाएगा। प्रशिक्षण के अन्य खर्चों, जैसे अध्यापकों की तनख्वाह, खुदरा माल आदि के लिए संस्थान को 50 रुपये प्रति प्रशिक्षार्थी प्रति माह दिए जाएंगे। इसके अलावा, कच्चे माल के लिए 25 रुपये प्रति माह और दिए जाएंगे, पर इस पर 200 रुपये प्रति कोर्स से अधिक व्यय न किया जा सकेगा।

धन्धा कैसे शुरू करें

प्रशिक्षण के दौरान ही व्यक्ति के धन्धे की बात पर पूरा गौर किया जाएगा। धन्धा कहां लगेगा, उसके लिए क्या यंत्र व मशीनें चाहिए, उस पर कितना व्यय होगा, कितनी राशि बैंक से ऋण द्वारा ली जाएगी और कितनी सरकार से अनुदान के तौर पर, बिक्री और खुदरा माल का क्या प्रबन्ध होगा—इन सभी मसलों पर बी० डी० ओ०, प्रशिक्षण संस्थान के प्रधानाचार्य, जिला उद्योग केन्द्र के जनरल मैनेजर, अन्य जिला अधिकारी और व्यक्ति सोचकर निर्णय लेंगे। एक परियोजना रिपोर्ट बनाई जाएगी, जिसमें ऊपर लिखी सभी बातों का ध्यान रखा जाएगा।

प्रशिक्षण के दौरान एक औजारों का सैट, जिसका मूल्य 250 रुपये से अधिक न हो, भी व्यक्ति को दिया जाएगा ताकि वह उस पर अभ्यास प्राप्त कर सके।

इस तरह परियोजना अधिकारी (आई० आर० डी०) अथवा बी० डी० ओ० व्यक्ति को मिलने वाले अनुदान की राशि का निर्णय

[शेष पृष्ठ 20 पर]

ग्रामांचल में निर्बल का सम्बल

मैहताब और लीला नर्मदा के तट पर बसे होशंगाबाद नगर से 85 कि० मी० दूर कासरनी गांव में रहते हैं। उन्होंने जीवन में पहली बार रेल यात्रा कुछ महीने पहले की जबकि होशंगाबाद के एकीकृत ग्राम विकास परियोजना अधिकारी ने उन्हें इटारसी के करीब 8 किलोमीटर दूर कीरतपुर गांव में आयोजित शिविर में बुलाया। मैहताब के लिए रेल में बैठना एक अनोखा अनुभव था क्योंकि गांव से बाहर निकलने का कभी मौका ही नहीं मिला और उसकी युवा पत्नी लीला के लिए तो यह बिल्कुल ही विचित्र सा अनुभव था। कीरतपुर में आकर उन्होंने न केवल रेल देखी बल्कि आस-पास घूमकर उन्नत विधि से की जा रही खेती-बाड़ी और पशुपालन के तरीके समझे। दरअसल कीरतपुर के इस शिविर में जो पशुपालन केन्द्र के अहाते में आयोजित किया गया मैहताब व लीला जैसे दम्पतियों को बुलाकर 2–3 महीने रखा गया और उन्हें पशु पालन के नए तरीके और पशुओं की बीमारियों के इलाज की खास-खास बातें बताई गईं। प्रशिक्षण के बाद इन्हें अपने ही गांव भेज दिया गया और पालने के लिए बकरियां दी गईं। इन बकरियों के लिए 1500 रुपये ऋण के रूप में और 1500 रुपये सहायता के रूप में दिए जाएंगे। बकरियों के दूध से इन गरीब और पिछड़े परिवारों की न केवल आमदनी बढ़ेगी बल्कि नई जानकारी का भी प्रसार होगा जोकि उन्होंने कीरतपुर में प्राप्त की है। मुझे मध्य प्रदेश की यात्रा में ग्राम-विकास के बारे में जो सुखद अनुभव हुए उनमें मैहताब-लीला और अन्य दम्पतियों से बात-चीत निराला ही महत्व रखती है। होशंगाबाद के परियोजना अधिकारी डा० इकबाल अहमद सिद्दकी का कहना है कि मध्य प्रदेश में इस तरह के तीन और शिविर लगाए गए हैं। कीरतपुर में 12 दम्पतियों और आठ व्यक्तियों का एक दल पिछले साल भी प्रशिक्षित किया गया था। वे लोग अपने-अपने गांव में पहुंचकर प्राप्त अनुभवों का लाभ उठा रहे हैं और बकरी पालन से अधिक आमदनी प्राप्त कर रहे हैं। यह निश्चित ही एक सराहनीय प्रयास है क्योंकि एक व्यक्ति के स्थान पर दम्पति को प्रशिक्षित करने से सम्पूर्ण परिवार को नए विचार मिलते हैं और वे अपना जीवन नए सिरे से ढाल सकते हैं।

होशंगाबाद में ही नहीं मध्य प्रदेश में सभी जिलों में एकीकृत ग्राम विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत अपने-अपने ढंग से निर्धन परिवारों की मदद की जा रही है जिससे कि वे अपने पैरों पर खड़े हो सकें। इस प्रदेश में कुल मिलाकर 459 विकास खण्ड हैं। मध्य प्रदेश में एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम 1978-79 से लागू किया गया था पर प्रथम वर्ष केवल 184 विकास खण्डों में लागू किया गया। 1979-80 में 28 अतिरिक्त विकास खण्डों को भी चुना गया जबकि 1980-81 से 212 विकास खण्डों को भी इसके अन्तर्गत ले लिया गया। लघु कृषक विकास एजेन्सी का जो कार्यक्रम पहले चल रहा था वह एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम में मिला दिया गया है। सूखा सम्भावना क्षेत्र कार्यक्रम का अभी पृथक अस्तित्व बना हुआ है पर लाभान्वितों वाली योजना को इसी ग्रामीण विकास कार्यक्रम में सम्मिलित कर लिया गया है। प्रदेश में प्रति वर्ष 2,754 परिवारों को लाभ पहुंचाया जाएगा। लक्ष्य यह है कि छठी पंचवर्षीय योजना के अन्त तक 13.77 लाख परिवार लाभान्वित हो जाएं।

समस्त देश में 5 हजार से अधिक विकास खण्ड हैं। उद्देश्य यह है कि छठी योजना काल में हर विकास खण्ड के औसतन 3 हजार परिवारों को इस कार्यक्रम के अन्तर्गत लाभ पहुंचाया जाए। सबसे पहले अत्यधिक गरीब ग्रामीण लोगों का जीवनस्तर सुधारने पर ध्यान दिया जाएगा। जिन 3 हजार परिवारों को लाभ पहुंचाने का लक्ष्य रखा गया है उनमें से करीब 2 हजार परिवार कृषि और उससे सम्बद्ध कार्यकलापों से लाभान्वित होंगे। 5 सौ परिवारों को ग्रामीण और कुटीर उद्योगों से लाभ पहुंचेगा जबकि 500 परिवारों को अन्य कामकाज में खपाया जाएगा। योजना के पहले वर्ष प्रति विकास खण्ड 5 हजार रुपये का प्रावधान रखा गया है। दूसरे वर्ष 6 लाख रुपये होंगे और अन्तिम तीन वर्षों में आठ-आठ लाख रुपये के हिसाब से राशि रहेगी। आधा खर्च केन्द्रीय सरकार देगी और आधा राज्य सरकार उठाएगी। केन्द्र में ग्रामीण पुनर्निर्माण मंत्रालय इस कार्यक्रम के कार्यान्वयन के लिए जिम्मेदार है और उसने इस संबंध में उपयुक्त मार्गनिर्देश तय किए हैं तथा प्रगति की समीक्षा के लिए क्षेत्रीय आधार पर राज्यों के प्रतिनिधियों के सम्मेलन बुलाकर विचार-विमर्श भी किया है ताकि खामियों को दूर किया जा सके और इसके अमल में तेजी लाई जा सके।

एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम की विशेषता यह है कि इसमें परिवार को मूल बिन्दु मानकर उसके अनुकूल योजनाएं बनानी हैं। इन योजनाओं से वस्तुतः गांव के निर्धन परिवारों को लाभ पहुंचने

भी लगा है। इसका कुछ अनुभव मुझे इंदौर के समीप देपालपुर विकास खण्ड में हुआ जहां रेशम कीटपालन में कई गरीब हरिजन परिवारों को काफी सहायता पहुंची है। मध्य प्रदेश टेक्सटाइल कारपोरेशन ने एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अधिकारियों के साथ मिलकर हरिजन और अन्य गरीब महिलाओं को रेशम कीट पालन में प्रशिक्षण की योजनाएं सफलतापूर्वक चलाई हैं। देपालपुर की हरिजन बस्ती में ऐसी कुछ महिलाओं ने दो महीने की ट्रेनिंग के बाद रेशम कीट पालन का काम-धंधा अपना लिया है और पिछले साल जुलाई से सितम्बर के तीन महीनों में 550 रुपये कमाए हैं। ट्रेनिंग के पहले कौशल्या के गरीब परिवार की आमदनी 100 रुपये माहवार से कम थी और अब करीब 240 रुपये माहवार हो गई है। इन्हें शहरीकल्चर के फार्म से ट्रेनिंग के बाद शहतूत की पत्तियां और बहुत सी शैशव अवस्था के रेशम कीट दे दिए जाते हैं। शहतूत की कटी हुई पत्तियों को छबड़ी पर बिखेर कर उन पर रेशम कीट पाले जाते हैं। 15 दिन के भीतर ये रेशम कीट कोसा के रूप में बदल जाते हैं जिन्हें शहरीकल्चर फार्म पर बेचा जा सकता है। शहरीकल्चर विभाग के कर्मचारी पूर्व निश्चित कीमत के अनुसार ये कोसे खरीद लेते हैं और इनसे रेशम तैयार करते हैं। कोसा की कीमत अदा करने के पूर्व ये पत्तियों के दाम काट लेते हैं। प्रशिक्षण के बाद महिलाओं को एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत 3 हजार रुपये की सहायता मिलती है। इसमें 2500 रुपये शैड या छप्पर के लिए होते हैं और 500 रुपये उपकरण आदि खरीदने के लिए। इस राशि का दो-तिहाई भाग बैंक ऋण के रूप में मिलता है और एक-तिहाई भाग ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अनुदान के रूप में। इस प्रकार देपालपुर में रेशम कीट पालन से अनेक गरीब परिवारों को लाभ पहुंचा है।

रेशम कीट पालन ही नहीं अन्य कुटीर उद्योगों से भी मदद पहुंचाई जा रही है। इसी विकास खण्ड में दरी की बुनाई के प्रशिक्षण से भी 10 लोगों को लाभान्वित किया गया है। इन्होंने बैंक से ऋण लेकर नियमित रूप से दरी बनाने का कार्य शुरू कर दिया है। एक अन्य हरिजन बस्ती में खजूर की पत्तियों से झाड़ू बनाने के कार्य को भी काफी बढ़ाया गया है। गोकुलपुर गांव और सीहोर में कई महिलाओं ने सिलाई का काम शुरू कर दिया है। सीहोर में कृष्णा एक दिन में करीब 5–6 रुपये कुरतों की सिलाई से कमाती है। नर्मदा के तट के पास बुदनी घाट में कई युवकों और किशोरों ने खिलौने, बेलन, चौपड़ की मोहरें आदि बनाने का काम सीखा है। भीमराव यह काम सीखकर 4–5 रुपये रोज कमा लेता है। महेश अब बेलन आदि बनाकर अपने पैरों पर खड़ा हो गया है। सीहोर और देवास जिले में कई युवकों ने मोटर रिवाइंडिंग का प्रशिक्षण लेकर काम धंधा शुरू कर दिया है।

देवास से कोई 40 किलोमीटर दूर नेवरी में राधाबाई ने लाख की चूड़ियां बनाने का काम काफी चमका लिया है। वह बैंक से एक हजार रुपये का ऋण लेकर 300 रुपये प्रतिमास की चूड़ियां बेचने का कारोबार कर रह रही है। इसी गांव में कैलास ने पशुओं के लिए रंग-बिरंगे धागों की मालाएं बनाने का काम बढ़ा लिया है। देवास के ही समीप एक बहुत अच्छा काम सिया गांव में हो रहा है जहां कई हरिजन महिलाएं पोलिएस्टर की कताई का काम सीख रही हैं। उन्हें आठ घंटे काम करके करीब तीन साढ़े तीन रुपये मिल जाते हैं और यह काम वे फुरसत के समय कर लेती हैं। इस प्रशिक्षण से उन गरीब महिलाओं में आत्मविश्वास पनपने लगा है।

योजनाएं चाहे भिन्न-भिन्न हों, गांव चाहे अलग-अलग हों, इन सब का उद्देश्य एक समान है—समाज के निर्धनतम परिवारों को ऊपर उठने में सहायता करना। मध्य प्रदेश के गांवों में जिन्हें मैं देख पाया, इस लक्ष्य की ओर तेजी से कदम उठ रहे हैं—यह संतोष का विषय है। □

गांवों के युवकों को स्वरोजगार के लिए प्रशिक्षण ⁂ [पृष्ठ 18 का शेषांश]

भी जल्दी से जल्दी लेने का प्रयत्न करेंगे। यह अनुदान आई० आर० डी० के नमूने पर आधारित है। कृषि और सम्बन्धित क्षेत्रों में कुल खर्चे का 25 प्रतिशत अनुदान छोटे किसानों को और $33\frac{1}{3}$ प्रतिशत सीमान्त किसानों और खेतिहर मजदूरों को मिलेगा। दस्तकारों व कुटीर और लघु उद्योगों तथा अन्य छोटे धन्धे चलाने वालों को कुल खर्च का $33\frac{1}{3}$ प्रतिशत अनुदान के तौर पर मिलेगा। सामान्यतः एक व्यक्ति को कुल मिलाकर 3000 रुपये से अधिक अनुदान नहीं दिया जाता। जनजातियों के सदस्यों के लिए यह सीमा 5000 रुपये है।

धन्धा शुरू करना काफी नहीं है। उसको मेहनत, ईमानदारी और जतन से आगे बढ़ाना होगा। इसकी पूरी जिम्मेदारी व्यक्ति पर होगी। सरकारी कर्मचारी केवल मदद कर सकते हैं, पर धन्धा तो व्यक्ति को ही चलाना होगा।

योजना में यह भी प्रावधान है कि बी० डी० ओ० प्रगति की देखरेख कुछ समय के लिए करते रहेंगे। प्रगति का एक कार्ड ब्लाक में रहेगा, जिससे समस्याओं की जानकारी बी० डी० ओ० को मिलती रहे और वह सहायता करते रहें।

अन्त में यह कहना उचित होगा कि इस योजना से देश को बहुत आशाएं हैं। लोगों के सहयोग से देश की बेरोजगारी की गम्भीर समस्या का हल निकल सकेगा, ऐसी हमारी धारणा है। □

ग्रामीण जनता को सामाजिक न्याय कैसे मिल सकेगा ?

कर्ण सिंह गौतम

छब्बीस जनवरी 1982 को पूरे राष्ट्र में 33वां गणतंत्र दिवस मनाया गया। वैसे तो हम गणतंत्र दिवस के राष्ट्रीय पर्व पर प्रतिवर्ष ही गत वर्षों की उपलब्धियों का सिंहावलोकन करते हैं और अपने को राष्ट्र के प्रति सेवा के लिए समर्पित करते हैं। परन्तु गत एक वर्ष में देश में बदलती हुई परिस्थितियों को देखते हुए जागरूक और निष्ठावान नागरिक बड़ी गंभीरता से विचार करने लगा है कि देश के अंदर बदली हुई अनुशासनहीनता का आखिर परिणाम क्या होगा ? सबसे बड़ी चिंता ग्रामीण बन्धुओं के सामाजिक विकास और उनको न्याय दिलवाने की है। प्रश्न इस बात का है कि प्रांतीय तथा केन्द्रीय सरकारें ग्रामीण विकास हेतु जो योजनाएं बनाती हैं और उन योजनाओं पर अधिक से अधिक धन खर्च करने के प्रावधान की जो घोषणाएं होती हैं, क्या उनके अनुसार गांव का विकास हो रहा है ? नगर और ग्रामीण विकास के विशाल अंतर को देखते हुए गांव का विकास नगरों की अपेक्षा बहुत पीछे है। इसलिए आज हम सबके सामने एक विचारणीय विषय है कि हमारे ग्रामवासियों को न्याय कैसे मिलेगा ?

लोकतांत्रिक योजना के निर्माण का आशय यही है कि जनशक्ति को कार्योन्मुखी बनाया जाए और ऐसा करते समय जनता का अधिकतम सहयोग प्राप्त किया जाए। पिछले 30 वर्षों में अपनी योजनाओं के माध्यम से हमने एक आधुनिक और आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था का निर्माण कर लिया है। हमने खाद्यान्न के मामले में आत्मनिर्भरता, औद्योगिक ढांचे में वैविध्य और विज्ञान तथा टैक्नालाजी में महत्वपूर्ण सफलता प्राप्त कर ली है। सतत् योजना निर्माण और उसके माध्यम से विभिन्न योजनाओं पर अधिक बल देकर और विभिन्न प्रकार के नियंत्रण लागू करके हम राष्ट्रीय परिसम्पत्तियां तैयार करने और सर्वाधिक दुर्बल वर्ग उद्धार तथा सबसे अधिक पिछड़े हुए क्षेत्रों में सुधार के कार्यक्रमों को लागू करने में सफल हो सके हैं। आर्थिक उन्नति का संतुलित होना आवश्यक है। आर्थिक उन्नति में आत्मनिर्भरता, स्थायित्व और सामाजिक न्याय भी सुनिश्चित होना चाहिए और साथ ही समाज के प्रत्येक वर्ग को यह आश्वासन मिलना चाहिए कि उनके प्रति किसी प्रकार का भेदभाव नहीं बरता जाएगा। कोई भी समाज तब तक उन्नति नहीं कर सकता जब तक कि उसके प्रत्येक वर्ग को उसकी आवश्यकतानुसार विकास के अवसर प्रदान न किए जाएं।

निर्धनता, रोजगार के अवसरों और बेरोजगारी जैसी समस्याओं के अर्थपूर्ण समाधान तेजी के साथ बढ़ती हुई अर्थव्यवस्था के ढांचे में ही ढूंढे जा सकते हैं। इस उद्देश्य की पूर्ति तभी हो सकती है जबकि छठी योजना में 5.2 प्रतिशत की दर से औद्योगिक विकास लक्ष्य की पूर्ति के लिए हर संभव प्रयास किए जाएं। यह व्यापक रूप से स्वीकार किया जाता है कि औद्योगिक विकास की इस गति के साथ गरीबी का प्रभाव कम करने के लिए विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में प्रत्यक्ष उपाय भी करने होंगे। उत्पादकता का प्रत्यक्ष लाभ निर्धन वर्ग तक पहुंचाने के कार्यक्रम शुरू किए जाने आवश्यक हैं। इन कार्यक्रमों में परिसम्पत्तियों का अन्तरण, निवेशों, ऋण, प्रशिक्षण और सेवाओं आदि की व्यवस्था शामिल होगी। इसके अतिरिक्त, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम के माध्यम से रोजगार के अवसर जुटाने न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रमों तथा अन्य कार्यक्रमों के माध्यम से सामाजिक सेवाएं जुटाने से जुड़े हुए कार्यक्रमों को संयुक्त रूप से लागू किया जा रहा है जिससे कि ऐसे कार्यक्रमों का सर्वाधिक ध्यान हर व्यक्ति के जीवन यापन पर रहे और योजना अवधि के दौरान प्रत्येक खंड में कम से कम तीन हजार गरीब परिवारों को निर्धनता रेखा से ऊपर उठाया जा सके। विस्तार और वितरण सेवाओं में आवश्यक परिवर्तनों को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिए। इसके साथ ही ऐसे प्रयास भी किए जाने आवश्यक हैं जिससे कि लोग स्वेच्छा से छोटे परिवार की अवधारणा को स्वीकार करें। अंतिम विश्लेषण में गरीबी और बेरोजगारी दूर करने की दिशा में हमारे प्रयासों की सफलता इस बात पर निर्भर करेगी कि हम जनसंख्या वृद्धि को किस हद तक रोक पाए हैं। आने वाले समय में हमारी चुनौती यह है कि उत्पादन और कार्यकुशलता में सर्वतोमुखी सुधार लाया जाए। ऐसा सुधार केवल सरकारी क्षेत्र के बुनियादी ढांचे के कार्यचालन में ही नहीं अपितु राष्ट्रीय जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में आवश्यक है। पिछले 30 वर्षों में हमने जो पूंजी और मानवीय संसाधन संचित किए हैं हम उनका अधिकतम लाभ उठाना चाहेंगे। इस संदर्भ में समाज के उस वर्ग पर विशेष दायित्व आ जाता है जिसे अभी तक योजनाबद्ध औद्योगिक विकास का न्यायोचित लाभ नहीं मिल सका है। इसका दायित्व ऐसे लोगों पर भी आता है जो शिक्षा और व्यवसाय के क्षेत्र में कार्यकुशलता प्राप्त कर चुके हैं। इसके विपरीत अपेक्षित प्रयास और त्याग केवल तभी संभव हो पाएगा जब कि हमारा सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था की आधारभूत समानता में विश्वास बना रहे और जो कार्य हम अपने लिए निर्धारित करें, वे इतने साहसपूर्ण हों कि लोगों की कल्पना को आकृष्ट करें।

सामाजिक न्याय की मुख्यतः दो दिशाएं होती हैं। एक तो समाज के सब से निर्धन वर्ग के जीवन स्तर में सुधार, दूसरे परिसम्पत्तियों के विभाजन में विषमताएं योजनागत अवधि के दौरान लोगों के जीवन स्तर में सुधार हुआ।

पिछले वर्षों में निजी खर्चे के विभाजन से यह भी पता चलता है कि सबसे निर्धन वर्ग के हिस्से में सुधार हुआ है। ग्रामीण क्षेत्रों में सबसे अधिक निर्धन वर्ग के खर्चे में हुई वृद्धि महत्वपूर्ण होते हुए भी इतनी विशाल नहीं है कि निर्धनता की रेखा से नीचे जीवन बिताने वाले लोगों के प्रतिशत में कोई विशेष कमी आ सकी हो। 1972–73 में निर्धनता रेखा के नीचे जीवन बिताने वाले लोगों का प्रतिशत कम हो गया। 1977–78 में पौष्टिक आहार की दृष्टि से 1971–72 में लगाए गए एक प्रत्यक्ष अनुमान से पता चला कि कैलोरी या प्रोटीन, या दोनों की कमी से प्रभावित ग्रामीण क्षेत्रों में लोगों का प्रतिशत शहरी क्षेत्रों से कम था। ये आंकड़े निश्चय ही चिंता के कारण हैं।

विकासात्मक योजना निर्माण का मूल उद्देश्य सामाजिक न्याय है। इस कारण आज की सबसे बड़ी विशेष आवश्यकता इस बात की है कि भूमि सुधार ऋण के और अधिक न्यायोचित वितरण जैसे परिसम्पत्ति अंतरण उपायों को अत्यंत प्रभावी ढंग से लागू किया जाए और ऐसे समन्वित प्रयास किए जाएं जिससे कि गरीब आदमी आर्थिक क्रियाकलापों की मूल-धारा से जुड़ा रहे और उसे तरक्की करने का अवसर मिल सके। इस दृष्टि से पहली बात तो यह कि उनके वर्तमान व्यवसाय की उत्पादन-शीलता और अर्जनक्षमता में सुधार लाया जाए। दूसरे मजदूरों के फालतू समय का प्रयोग करने के लिए नए क्रियाकलापों के अतिरिक्त रोजगार जुटाएं, तीसरे उनके वर्तमान तथा नए क्रियाकलापों में उनकी सहायता के लिए प्रशिक्षण, ऋण और समर्थन-कारी पद्धतियां जुटाई जाएं। यह बात एकदम साफ है कि ग्रामीण निर्धन मजदूरों को अपने आपको एक ऐसे शक्तिशाली गैर-संगठन के रूप में संगठित करना होगा जिसमें धनिक वर्ग के लोग अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए उनका लाभ न उठा सकें। अब समय आ गया है जबकि ग्रामीण निर्धन वर्ग को अपने आप इतने प्रभावी ढंग से संगठित करना चाहिए जिससे कि हमारी विकासात्मक योजनाओं के लाभ वस्तुतः उन तक पहुंच सकें और जल्दी से जल्दी लोगों का जीवन स्तर ऊंचा उठ सके। इस संबंध में दो मत नहीं हो सकते कि यदि ग्रामीण निर्धन वर्ग आज की तरह असंगठित बना रहता है तो गरीबी और भी अधिक तेजी के साथ बढ़ती रहेगी। □

भारत में अफीम की खेती एक विश्लेषण

डा० ओम प्रकाश शर्मा एवं प्रो० मुरारी लाल सिंघल

पोस्त या खसखस का दाना पौष्टिक खाद्य पदार्थ है। और इसके पौधे से ही अफीम की भी प्राप्ति होती है। अफीम एक नशीली वस्तु है। अधिक मात्रा में इसका उपयोग अत्यन्त हानिकारक और प्राणघातक हो सकता है पर अफीम से अनेक औषधियां भी तैयार की जाती हैं जो मनुष्य के स्वास्थ्य की रक्षा करने में सहायता पहुंचाती हैं। हमारे देश का अफीम उत्पादक देशों में प्रमुख स्थान है। देश की निजी आवश्यकताओं की पूर्ति के अतिरिक्त, काफी मात्रा में हम अफीम का दूसरे देशों को निर्यात भी करते हैं।

अफीम की काश्त हेतु किसान मक्का की फसल की कटाई के साथ ही इसे बोना शुरू कर देता है। इसकी काश्त के लिए खेत को तीन से चार बार जोतना पड़ता है और उसकी तह तैयार करने के बाद मिट्टी के एक-एक ढेर को पटेला कर तोड़ा जाता है। फिर समतल खेत में देशी (गोबर) व रासायनिक दोनों प्रकार का खाद दिया जाता है। इसके बाद क्यारियां बनायी जाती हैं। जिसकी लम्बाई-चौड़ाई किसान सामान्यतः 5 फुट लम्बी 2 फुट चौड़ी रखता है। पहले किसान पानी की सुविधा देखकर अफीम की काश्त हेतु इच्छित क्षेत्र का पट्टा ले लिया करता था किन्तु अब तो जब से विश्व बाजार में अफीम की खेती की प्रतिस्पर्धा शुरू हो गई है, भारत से वर्ष-प्रतिवर्ष अफीम की काश्त के क्षेत्र में कमी की जाने लगी है।

अफीम की काश्त के लिए तैयार किए गए खेतों में इसके बीज बिखेर दिए जाते हैं जिसे 'पोस्तदाना' के नाम से जाना जाता है। अफीम का पौधा कोई 3½ फुट तक ऊंचा होता है, जब तक उसमें डंठल नहीं पड़ता। जनवरी माह में ही इसके पौधे पर रंग-बिरंगे फूल खिलने लगते हैं और कई रंगों के फूलों से खेत सज जाता है। इन फूलों में एक तीखी और मादक गंध होती है। इसकी छोटी-छोटी नरम-नरम डोडियों को भी तेल व मसाले में तलकर लोग शौक से खाते हैं। इसमें कुछ नशे की मात्रा होती है किन्तु इस क्षेत्र के लोग इस मौसम में इसे खाए बगैर रहते नहीं।

डोडा जब हरे रंग का नरम रहते हुए परिपक्वता पर आ जाता है, तब उसमें तीन बार धार का चीरा लगाया जाता है जो इसे इतनी सावधानी पूर्वक लगाना होता है कि वह डोडे के भीतरी भाग में लगे अन्यथा डोडा फट जाता है। चिराई का कार्य किसान प्रतिदिन दिन में करता है। रोज प्रातः काल उस चीरे पर अफीम के दूध को छरपले पर उठा लिया जाता है। इस प्रकार बूंद-बूंद दूध इकट्ठा किया जाता है। यह कार्य सूर्य की रोशनी तेज हो उसके पूर्व ही पूरा कर लिया जाता है। प्रत्येक डोडे पर कोई पांच बार चीरा लगाने का कार्य किया जाता है। इन दिनों किसानों को फुर्सत नहीं मिलती और न ही गांवों में मजदूर ही मिल पाते हैं। किसान का पूरा परिवार इस कार्य में लगा रहता है।

प्रतिदिन एकत्र किया अफीम शाम को नारकोटिक्स विभाग द्वारा गांव में नियुक्त मुखिया के यहां प्रतिदिन के तौल के हिसाब से रखा जाता है। औसत से अधिक अफीम देने वाले किसान को पैसा भी औसतमान से अधिक मिलता है।

जब डोडा बिल्कुल सूख जाता है, तब किसान उसे फोड़कर उसके अन्दर से पोस्त दाना एकत्र कर लेता है और उसे बेच देता है। पोस्तदाना या खसखस 10 से 12 रुपये किलो की दर से बिकता है और इससे भी किसान को अफीम के बराबर आय होती है। डोडे के चूरे को पहले खेतों में बिखेर दिया जाता था किन्तु अब इसे भी बेचा जाने लगा है। डोडे-चूरे के लाइसेंस प्राप्त व्यापारी डोडे-चूरे का व्यवसाय करते हैं। इस चूरे को पानी में भिगोने से उसका खस पानी में आ जाता है जो नशे के काम आता है ।

भारत में अफीम का उत्पादन मध्य प्रदेश, राजस्थान, और उत्तर प्रदेश में होता है। मध्य प्रदेश सबसे अधिक अफीम का उत्पादन करता है और उसमें भी मंदसौर जिला अफीम के उत्पादन की दृष्टि से अग्रणी है लेकिन अफीम के उत्पादन के मामले में हाल के वर्षों में राजस्थान में भी काफी तेजी से प्रगति हुई है। राजस्थान में कोटा, झालावाड़ और चित्तड़ के अलावा थोड़ी बहुत अफीम की काश्त बूंदी, भीलवाड़ा, उदयपुर, और बांसवाड़ा जिलों में भी होती है। सन् 1980-81 में राजस्थान में 54,379 किसानों ने 10,11,380 हेक्टेयर भूमि में काश्त की है। अफीम की औसत उपज 45 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर रही है जो देश का सर्वाधिक औसत है।

अफीम की काश्त, वितरण और विपणन का कार्य भारत सरकार के अधिकार क्षेत्र में है। वित्त मंत्रालय के अन्तर्गत नारकोटिक्स विभाग अफीम नियंत्रण का कार्य करता है। अफीम की खेती के लिए काश्तकारों को हर साल नारकोटिक्स विभाग से पट्टे या लाइसेंस प्रदान किए जाते हैं। लाइसेंसशुदा किसान ही इसकी खेती कर सकता है और वह भी निर्धारित रकबे में। नारकोटिक्स विभाग अपने निर्धारित मानदण्डों के अनुसार पट्टे प्रदान करता है जिसमें एक शर्त कम से कम न्यूनतम उपज के लिए निर्धारित मात्रा में अफीम विभाग को भी देनी होती है। सरकार ने गाजीपुर और नीमच में अफीम और एलकालायड तैयार करने के लिए कारखाने स्थापित कर रखे हैं। ये कारखाने काश्तकारों से प्राप्त की गई कच्ची अफीम का परिष्कार करते हैं और एलकालायड भी तैयार करते हैं।

अफीम की सबसे अधिक उपज देने वालों को प्रोत्साहन के रूप में 5 हजार रुपये नगद पुरस्कार के रूप में दिए जाते हैं और उस गांव के 35 किलोग्राम से अधिक उपज देने वाले प्रति किसान को पुरस्कृत किया जाता है।

प्रति हेक्टेयर बढ़ते उत्पादन और किसानों की दिलचस्पी के बावजूद अफीम की काश्त की वर्तमान स्थिति और भविष्य अन्तर्राष्ट्रीय बाजार की स्थिति के कारण संकटपूर्ण है। विश्व बाजार में गहरी प्रतियोगिता और अमरीका में भारतीय अफीम की मांग घटने के कारण पिछले 2 साल का अफीम का पूरा उत्पादन (2500 टन) सरकारी गोदामों में भरा पड़ा है। इस स्टाक के रहते अफीम का उत्पादन का रकबा लगातार घटने और लाइसेंस की कड़ी शर्तों के कारण विडम्बनापूर्ण स्थिति उत्पन्न हो गयी है। इस वर्ष लगभग 20 प्रतिशत रकबा घटने की सम्भावना है। अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में उत्पन्न अफीम की कीमत घटाने के लिए भी दबाव है और ऐसी स्थिति में देश में किसानों से क्रय मूल्य घटाने की मजबूरी बन सकता है। जबकि काश्त की कीमत, पानी और उर्वरकों की लागत में वृद्धि के साथ बढ़ती जा रही है। आज यह भी स्थिति है कि पाकिस्तान से अफीम तस्करी के द्वारा भारत आ रही है। पाकिस्तान में अफीम का उत्पादन अवैध ढंग से होता है और इस कारण इस पर काबू पाना मुश्किल है।

आस्ट्रेलिया और तुर्की ने अफीम के डोडे से ही मार्फीन निकालने की विधि निकाली है जिसे उनकी मार्फीन अन्तर्राष्ट्रीय बाजार अफीम से निकाली जाने वाली मार्फीन की अपेक्षा सस्ती पड़ती है लेकिन भारत में इस विधि के अपनाने में अड़चन यह है कि यहां अफीम की खेती परम्परागत खेती के रूप में स्वीकृत है। संयुक्त राष्ट्र संघ भी इसी दृष्टि से भारत की सहायता करता है। साथ ही किसान खसखस, अफीम के डोडे-चुरे, लकड़ी-सभी का उपयोग करता है।

इन समस्याओं के बावजूद किसानों की अफीम की खेती में रुचि घट नहीं रही है क्योंकि इसकी काश्त में अन्य फसलों की अपेक्षा उनको फिर भी काफी अधिक लाभ मिलता है। अनुमानतः किसान को अफीम से 7,387 रुपये प्रति हेक्टेयर की आय होती है जबकि गन्ने से आय 4547 रुपये प्रति हेक्टेयर और गेहूं से आय 3600 रुपये प्रति हेक्टेयर होती है। अफीम की खेती में किसानों को उसकी लागत काटकर लगभग 5,500 रुपये से 6000 रुपये तक का लाभ हो जाता है।

नारकोटिक्स विभाग यह प्रयास करता है कि अफीम उत्पादन का सम्पूर्ण भाग सरकारी खरीद के अन्तर्गत आ जाए और उसकी किसी प्रकार तस्करी न हो सके। लेकिन इसके बावजूद तस्करी पर पूर्ण नियंत्रण सम्भव नहीं हो सका है। वस्तुतः अफीम उत्पादन का बड़ा लाभ काले बाजार में उसकी खपत से वृद्धि ही है। सामान्यतया अफीम नशा करने वालों के द्वारा चोरी से खरीदी-बेची जाती है। इसकी खपत जोधपुर, जैसलमेर, पंजाब और हरियाणा में अधिक है। मार्फीन, हेरोइन, कोडीन आदि के रूप में इसकी तस्करी अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर होती है। तस्कर बाजार में 1 किलो मार्फीन की कीमत 50 हजार रुपये तक की है और हेरोइन की 2 लाख रुपये तक की।

अफीम की खेती का वर्तमान कोई बहुत उत्साहवर्द्धक नहीं है, लेकिन यह माना जा सकता है कि यह एक अस्थायी स्थिति है और भविष्य इस चिन्ताजनक स्थिति के बाद अधिक श्रेष्ठ और कृषकों के लिए लाभप्रद होगा।

बचिए थ्रेशर दुर्घटनाओं से

- ✦ पूरी जानकारी के बिना थ्रेशर न चलाएं।
- ✦ आई एस आई मार्के के थ्रेशरों या कम से कम सुरक्षात्मक यंत्रों से युक्त थ्रेशरों का ही प्रयोग करें।
- ✦ कार्य करते समय लापरवाही न बरतें, इससे घातक चोटें लग सकती हैं।
- ✦ थकान महसूस होने पर कार्य न करें, इससे आपकी जान जोखिम में पड़ सकती है।
- ✦ नशे की हालत में थ्रेशर पर कार्य न करें।
- ✦ कम रोशनी में थ्रेशर न चलायें। इससे शरीर व दिमाग पर अतिरिक्त बोझ पड़ता है।
- ✦ ढीले कपड़े न पहनें।
- ✦ थ्रेशर में नमी वाली फसल न डालें।

आग लगने के खतरे से सावधान रहें

- ✦ ट्रैक्टरों व इंजिनों को स्पार्क-रोधक लगाये बिना न चलाएं।
- ✦ बिजली के खम्बों के नीचे फसल एकत्र न करें।
- ✦ थ्रेशिंग-फर्श पर धूम्रपान न करें।

आपका जीवन, आपके अंग तथा फसल सभी मूल्यवान हैं
थोड़ी सी सावधानी से इन्हें सुरक्षित रखा जा सकता है

davp 81/316

कृषि उत्पादों के निर्यात की नई नीति

सी० वेंकटरमन, अतिरिक्त सचिव, वाणिज्य मंत्रालय

पिछले तीन दशकों के दौरान हमने कृषि के क्षेत्र में महत्वपूर्ण प्रगति की है। नवीनतम कृषि प्रौद्योगिकी के परिणामस्वरूप कृषि उत्पादन में भारी वृद्धि और कई फसलों की उपज में स्थायित्व आया है। हमारे समूचे निर्यात में 30 प्रतिशत भाग कृषि उत्पादों का है जिसके कारण कृषि उत्पादों का निर्यात की दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थान है। 1976-77 के व्यापार में नाममात्र के अधिशेष की तुलना में वर्ष 1980-81 में हमारे व्यापार में 5,724 करोड़ रुपये का घाटा आ गया। इस स्थिति के कारण निर्यात में वृद्धि की आवश्यकता और अधिक हो गई। वास्तव में इन हाल के वर्षों में निर्यात की अपेक्षा आयात में वृद्धि होने के कारण व्यापार असंतुलन में वृद्धि हुई। क्योंकि आयात में भारी कटौती की संभावनाएं सीमित हैं अतः निर्यात बढ़ाने का जोरदार प्रयास ही एकमात्र विकल्प रह जाता है। छठी पंचवर्षीय योजना में निर्यातों के विकास की वास्तविक वार्षिक दर 9 प्रतिशत आंकी गई है।

किसी भी निर्यात नीति का उद्देश्य उन वस्तुओं के निर्यात को प्रमुखता देना होता है जिनमें प्राकृतिक परिस्थितियां हमारे पक्ष में हों। विशाल उत्पादन के आधार को देखते हुए कृषि उत्पादों का निर्यात ऐसा क्षेत्र है जिसका हमें पूरा लाभ उठाना चाहिए, विशेष रूप से ये इसलिए भी कि कृषि हमारी अर्थव्यवस्था की मेरूदंड है और भारत की 70 प्रतिशत जनसंख्या इसी पर आश्रित है। भारत में कृषि श्रम प्रधान व्यवसाय है। देशी बाजार की जरूरतों को पूरा करने के अतिरिक्त कृषि उत्पादों के लिए निर्यात का नया मार्ग खुलने से कृषकों के जीवन स्तर में सुधार होगा और ग्रामीण क्षेत्रों में बेहतर सुविधाएं प्रदान की जा सकेंगी। कृषि उत्पादों के लिए विदेशी मुद्रा की बहुत कम आवश्यकता होती है और उनके उत्पादन की प्रक्रिया शुरू होने और उत्पादन प्राप्त होने के बीच का अन्तराल भी कम होता है।

खनिजों और अयस्कों जैसे विभिन्न उर्वरताहारी संसाधनों के अतिरिक्त निर्यात योग्य कृषि उत्पादों के संसाधन पुनः इस्तेमाल किए जा सकते हैं। उत्पादों के निर्यात को विशेष महत्व दिए जाने के ये ठोस कारण हैं। हमारे कृषि उत्पादों के निर्यात की बड़ी गुंजाइश का अनुमान इसी बात से हो जाता है कि कृषि वस्तुओं के विश्व निर्यात में हमारा योगदान केवल लगभग एक प्रतिशत है जबकि हमारी कई वस्तुओं की मांग विश्व में बढ़ती जा रही है और कृषि उत्पादों की हमारी क्षमता भी बहुत है।

कार्यनीति

कृषि उत्पादों के निर्यात को बढ़ाने के लिए विस्तृत नीति में जो पहलू शामिल होने चाहिएं, वे हैं :—(1) उत्पादकता स्तर को ऊपर उठाकर उत्पादन में वृद्धि की जाए ताकि अन्तर्राष्ट्रीय बाजार की प्रतिस्पर्द्धा में हम ठहर सकें। (2) देश में उत्पादन के उतार-चढ़ाव के बावजूद निर्यात के लिए निश्चित किए गए उत्पादों की उपलब्धि न्यूनतम स्तर पर अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में सुनिश्चित की जाए। (3) निर्यात के लिए नई वस्तुओं और नए बाजारों का पता लगाया जाए। निर्यात उत्पादन पर निर्भर करता है। अतः चाय, काफी, तम्बाकू, काजू, मसालों आदि जैसे निर्यातोन्मुखी उत्पादों का उत्पादन बढ़ाना भी इस योजना में शामिल है।

निर्यातोन्मुखी कृषि फसल क्षेत्र में उत्पादन वृद्धि की योजना के कुछ लक्ष्य इस प्रकार हैं :—चाय का उत्पादन 56.4 करोड़ किलोग्राम से बढ़ाकर 70.5 करोड़ किलोग्राम, काफी का उत्पादन 1.18 लाख टन से बढ़ाकर 1.54 लाख टन, काजू का उत्पादन **1.80 लाख टन से बढ़ाकर 3 लाख टन, काली मिर्च का उत्पादन 20,000 टन से बढ़ाकर 40,000 टन। यह अनुभव** किया गया है कि कतिपय निर्यातोन्मुखी वस्तुओं की उत्पादकता कम है। इनकी उत्पादकता को बढ़ाने के लिए समय पर पौध लगाने, कीटों और अपतृणों का उन्मूलन करने, अधिक उपज देने वाली किस्मों की पौध लगाने, उर्वरकों का अधिकतम उपयोग करने आदि जैसे उपाय करने की योजनाएं शुरू की गई हैं। निर्यात की दृष्टि से विश्व बैंक की सहायता प्राप्त परियोजना के एक भाग के रूप में काजू की पैदावार का क्षेत्र बढ़ाने का भी कार्य किया जा रहा है।

समुद्री उत्पादों के मौजूदा उत्पादन स्तर में वृद्धि की काफी गुंजाइश है। हमारे लिए अभी तक अपनी अनन्य समुद्री सम्पदा का पूरा उपयोग करना संभव नहीं है। इस दिशा में हमारे प्रयास अभी तक तटीय क्षेत्र तक ही सीमित हैं। आवश्यकता इस बात की है कि गहरे समुद्र में मछली पकड़ने का कार्य बड़े पैमाने पर शुरू किया जाए और यदि आवश्यक हो तो इसके लिए संयुक्त प्रयासों की व्यवस्था की जाए।

दीर्घावधि नीति

कुछ ऐसी भी वस्तुएं हैं जिनकी घरेलू मांग जनसंख्या की वृद्धि के साथ-साथ बढ़ती जा रही है जैसे खाद्यान्न, खल तथा मांस। घरेलू मांग के साथ-साथ अगर हमें इन वस्तुओं का निर्यात करना है तो यह जरूरी है कि इन वस्तुओं के लिए एक स्थायी दीर्घावधि निर्यात नीति बनाई जाए।

चावल, खल और तेल जैसी वस्तुओं, जिसको हम घरेलू मांग की पूर्ति के साथ-साथ किसी भी वर्ष में प्राप्त करने में समर्थ हों, के निर्यात का एक न्यूनतम स्तर निर्धारित करना होगा। देश में इन वस्तुओं के कुल

[शेष पृष्ठ 28 पर]

राजस्थान में लघु उद्योगों की भूमिका

✳

सतीश कुमार जैन

राजस्थान की भूमि भारतवर्ष में बलिदान, शौर्य एवं पराक्रम की प्रतीक बन गई है। राजपूत अपनी वीरता, शौर्य, शरणागत की रक्षा तथा बलिदान एवं कर्त्तव्य भावना के लिए इतिहास प्रसिद्ध रहे हैं। पूर्व में रजवाड़ा एवं राजपूताना के नाम से विख्यात राजस्थान राज्य मुख्यतः देशी रियासतों के विलीनीकरण से निर्मित हुआ है।

स्थापत्य, दुर्गों, महलों, मन्दिरों तथा सरोवरों व झीलों का यह राज्य अपने कलात्मक हस्त उद्योगों के लिए देश में प्रसिद्ध है। हस्त-शिल्प से निर्मित आकर्षक एवं मोहक परम्परागत वस्तुओं के निर्माण के लिए राजस्थान का अपना विशिष्ट स्थान है।

राजस्थान में विद्युत उत्पादन की क्षमताएं बढ़ने के कारण वहां उद्योग धन्धों के विकास की पर्याप्त संभावनाएं हैं। 1982–83 तक राज्य में विद्युत उत्पादन क्षमता 1800 मेगावाट हो जाने की आशा है।

राज्य में खनिज भंडारों, नमक, ऊन, चमड़े तथा अन्य कच्चे माल के अच्छे परिमाण में उपलब्ध होने के कारण बृहत तथा लघु उद्योगों के विकास की बहुत संभावनाएं हैं। यद्यपि राज्य में लौह धातुओं तथा कोयले की खानों का अभाव है किन्तु इसमें अलौह धातुओं का विशाल भंडार सुरक्षित है। राज्य में अधातु खनिजों के भंडार भी हैं। डीडवाना, फलौदी, पंचपद्र एवं बलोतरा में नमक के विशाल भंडार हैं।

राक फास्फेट के अधिक परिमाण में उपलब्ध होने के कारण यहां उर्वरक कारखानों तथा फासफोरस से अम्ल बनाने की क्षमता में वृद्धि हुई है। चूने का पत्थर भी बहुत बड़े परिमाण में मिलने के कारण राज्य में अनेक सीमेन्ट मिल स्थापित हैं तथा निर्माणाधीन हैं।

राजस्थान में 32 औद्योगिक क्षेत्र स्थापित हैं जिनमें जल, यातायात तथा अन्य सुविधाएं उपलब्ध हैं। 32 अन्य क्षेत्रों के विकास पर कार्य हो रहा है। ग्रामीण क्षेत्रों में भी 50 उत्पादन केन्द्रों का विकास हुआ है अथवा हो रहा है। राज्य के पिछड़े हुए 15 जिलों में अनेक प्रकार के उद्योगों की स्थापना की गई है तथा की जा रही है। इनके अतिरिक्त 9 अन्य जिलों में भी औद्योगीकरण बढ़ रहा है। राज्य में वर्ष 1979–80 में राजस्थान वित्त निगम द्वारा 2510 औद्योगिक इकाइयों को 31.54 करोड़ रुपये के ऋण स्वीकृत किए गए थे। 1980–81 में 2620 औद्योगिक इकाइयों को 37 करोड़ रुपये के ऋण स्वीकृत हुए। उद्योगों के विकास के लिए 1981–82 में निगम द्वारा 42 करोड़ रुपये के ऋण स्वीकृत करने का लक्ष्य है। 1980–81 में 9346 स्थायी औद्योगिक इकाइयों का पंजीकरण किया गया था। लक्ष्य है कि 1981–82 में 12,200 इकाइयों का पंजीकरण किया जाए।

राजस्थान में लघु उद्योगों के विकास में निरन्तर सफलता मिल रही है। उनकी संख्या 22,000 से बढ़कर 33,000 हो गई है। उनमें पूंजीनिवेश भी 87 करोड़ रुपये से बढकर 135 करोड़ रुपये हो गया है। इन लघु उद्योगों द्वारा 22 लाख व्यक्तियों को रोजगार मिला हुआ है।

जहां रेगिस्तान राजस्थान के लिए अभिशाप है तो साथ ही साथ भेड़-पालन के लिए और ऊन उत्पादन के लिए वरदान भी सिद्ध हुआ है। इसी कारण भेड़ पालन तथा उनसे ऊन प्राप्त करना राज्य का एक प्रमुख उद्योग है। इसके पश्चिमी एवं उत्तरी पश्चिमी भाग भेड़ पालन के प्रमुख क्षेत्र हैं। समूचे राजस्थान में लगभग एक करोड़ भेड़े हैं जिनसे कम से कम दो लाख व्यक्तियों को भेड़ पालन एवं ऊन उत्पादन से जीवकोपार्जन होता है। बीकानेर, जैसलमेर, बाड़मेर, जोधपुर, नागौर, सीकर, झुंझनू, चुरु, गंगापुर, जयपुर, टौंक, भीलवाड़ा, चितौड़, उदयपुर और सवाई माधोपुर ऊन उत्पादन के मुख्य जिले हैं।

राजस्थान की भेड़ों की प्रमुख नस्लें हैं :— चौकला, मगरा, जैसलमेरी, नाली, मालपुरा, सोनाड़ी, मारवाड़ी और पुगल। इन भेड़ों से विभिन्न श्रेणियों की ऊन प्राप्त होती है जो कालीन, कम्बल और मोटा ऊनी वस्त्र बनाने में प्रयुक्त होती है। कुछ बढ़िया किस्म का पतला ऊनी कपड़ा बनाने के लिए बढ़िया ऊन भी यहां प्राप्त होती है। ऊन प्रायः सभी श्रेणियों की उपलब्ध होती है। चौकला एवं जैसलमेरी भेड़ों की ऊन उत्तम, मगरा, नाली, पुगल और मारवाड़ी भेड़ों की ऊन मध्यम श्रेणी की तथा मालपुरा व सोनाड़ी भेड़ों की ऊन मोटी श्रेणी की होती है। राजस्थान मनपसन्द एवं विभिन्न श्रेणियों की ऊन का अच्छा स्रोत तथा क्षेत्र है।

चौकला एवं जैसलमेरी भेड़ों की ऊन कपड़ा, कम्बल व लोई बनाने; मगरा, नाली, पूगल मारवाड़ी व मालपुरा भेड़ों की ऊन कम्बल एवं लोई बनाने तथा मालपुरा व सोनाड़ी भेड़ों की ऊन नमदा बनाने में प्रयुक्त होती है। राजस्थान में उपलब्ध ऊन 30 से 60 काउन्ट तक की है। कुल उत्पादिन ऊन का 8 प्रतिशत भाग उत्तम बारीक श्रेणी का होता है जो बढ़िया ऊनी वस्त्र बनाने के काम में आता है। 60 प्रतिशत भाग मध्यम तथा 32 प्रतिशत भाग मोटी श्रेणी का होता है, यह दोनों कालीन, कम्बल, लोई, नमदा आदि बनाने के काम की होती है।

राजस्थान में लगभग 150 लाख किलोग्राम ऊन वार्षिक रूप से उपलब्ध होती है जो देश के कुल ऊन उत्पादन का 42 प्रतिशत है। राजस्थान में उपलब्ध ऊन को राज्य से बाहर अन्य राज्यों में भी भेजा जाता है। यद्यपि ऊन का विविध रूपों में उपयोग करने के लिए राज्य में छोटे तथा कुटीर उद्योगों की इकाइयों का जाल फैला हुआ है तथा इसके शुष्क क्षेत्रों में ऊनी धागे को निर्मित करने के लिए कारखाने स्थापित हैं किन्तु ऊन प्राप्त होने की संभावनाओं को दृष्टि में रखते हुए यह अपेक्षित रूप से व्यापक रूप में विकसित नहीं हैं। राज्य में ऊन आधारित उद्योगों की विपुल संभावनाओं को देखते हुए सरकार द्वारा अब इस ओर अधिक ध्यान दिया जा रहा है। इसके कारण राज्य में विभिन्न प्रकार के ऊन उद्योग पनपने आरंभ हो गए हैं। राज्य का भेड़ एवं ऊन विभाग संकर प्रजनन द्वारा भेड़ों की नस्लों को उन्नत कर रहा है। स्थानीय भेड़ों में रूसी मेरीना एवं रेम्बूर नस्ल की विदेशी भेड़ों से संकर प्रजनन किया जा रहा है। अम्बिका नगर के केन्द्रीय भेड़ व ऊन अनुसंधान संस्थान ने नई नस्लों की भेड़े उत्पन्न की हैं जो कालीन निर्माण के लिए अच्छी ऊन देती हैं।

राजस्थान में पाई जाने वाली ऊन अधिक लोच-लचकदार होती है और दबाने पर वापिस ऊपर उठने की क्षमता रखती है। कालीन बनाने के लिए मूलतः ऐसी ही ऊन की आवश्यकता होने के कारण राज्य में प्राप्त होने वाली ऊन का अधिकतर उपयोग कालीन निर्माण के लिए किया जाता है। राजस्थान का ऊनी कालीन निर्माण उद्योग बहुत प्रसिद्ध है।

कालीनों को अधिक मलायम एवं चमकदार बनाने के लिए न्यूजीलैंड से आयातित ऊन का भी सम्मिश्रण किया जाता है। सम्मिश्रण से बनाए गए कालीन अच्छी किस्म के होते हैं और उनकी विदेशों में भी बहुत मांग है। प्रतिवर्ष लगभग दो करोड़ रुपये के कालीन राजस्थान से विदेशों को निर्यात किए जाते हैं। उल्लेखनीय है कि सारे भारत से लगभग 85–100 करोड़ रुपये के कालीन विदेशों को भेजे जाते हैं।

फ़ारसी शैली पर निर्मित यह उच्च कोटी के आकर्षक कालीन परशियन डिजाइनों आशान, चिकतान, किरमान, इस्फाहान, पक्षियन, अरमान, हामदान आदि की अनुकृति में बनाए जाते हैं। यह हस्तनिर्मित कालीन सामान्यतः 3 × 5 फीट से 9 × 12 फीट आकार के विविध मिश्रित रंगों में, विविध डिजाइनों में फूलपत्ती एवं बेल-बूटों के साथ बनाए जाते हैं। यह आकर्षक चमकदार रंगों में होते हैं और विदेशों में भी बहुत पसन्द किए जाते हैं। इनका मूल्य प्रति वर्ग फुट 60 रुपये से लेकर 1000 रुपये तक होता है।

हस्त-निर्मित यह कालीन प्रायः उन कारीगरों द्वारा बनाए जाते हैं जो पीढ़ी-दर-पीढ़ी इस कार्य में लगे होने के कारण इसमें माहिर हैं। कालीन निर्माण उद्योग मुख्यतः जयपुर, चीमू, सांगानेर, शाहपुरा, बस्ती, दौसा, टौंक किशनगढ़ व भीलवाड़ा में विद्यमान है। इस उद्योग से लगभग 20 हजार कारीगरों को आजीविका प्राप्त हो रही है।

राजस्थान में उपलब्ध होने वाली ऊन का उपयोग उत्तर प्रदेश के भदोई, मिर्जापुर और जौनपुर के कालीन निर्माण केन्द्रों में भी किया जाता है। वहां पर भी उच्च कोटि के कालीन निर्मित होते हैं। कालीनों को अब मशीनों द्वारा भी बनाया जाता है। मशीन से "टफटेड" एवं "एक्समिन्स्टर" कालीन बनाए जाते हैं। टफटेड़ यानी गुच्छेदार कालीन एक रंग के सादा कालीन होते हैं जो कमरों में दीवार से दीवार तक बिछाने के काम आते हैं। एक्समिन्स्टर प्रकार के कालीन रंगों व बेल बूटों सहित हस्त-निर्मित कालीनों के समान ही होते हैं। समस्त भारत में लगभग 5 लाख कारीगर कालीन बनाई उद्योगों में लगे हुए हैं।

टौंक में कालीन निर्माण के अतिरिक्त बीड़ी उद्योग भी विकसित है। वहां पर इस कार्य में बालक, युवा, प्रौढ़ तथा वृद्ध नर तथा नारी सभी लगे हुए हैं। इस समय वहां बीड़ी बनाने के कई कारखाने भी स्थापित हैं। वैसे तो जिले में घर-घर में बीड़ी बनाने का काम होता है किन्तु अकेले टौंक में ही 6000 से अधिक व्यक्ति बीड़ी बनाने के काम से रोटी कमा रहे हैं। कोटा, बांरा, सवाई माधोपुर, ब्यावर, नसीराबाद, बाड़मेर व भरतपुर में भी बीड़ियां बनाई जाती हैं। बीड़ियों का निर्यात विदेशों को भी होने लगा है।

राजस्थान हथकरघा उद्योग के लिए भी यथेष्ट प्रसिद्ध है। इस परम्परागत व्यवसाय की सफलता का कारण है पीढ़ी-दर-पीढ़ी चले आ रहे बुनकरों की लगन एवं कुशलता तथा अपने व्यवसाय के प्रति निष्ठा। हथकरघा द्वारा कोटा, कैथूल, मथानिया और जोधपुर आदि में बने वस्त्रों की न केवल देश में बल्कि अमेरिका ब्रिटेन और फ्रांस में भी खपत है। कोटा में बना डोरिया, मथानिया की मलमल और जयपुर तथा जोधपुर में निर्मित नान-फैब्रिक वस्त्र सारे देश में प्रसिद्ध हैं।

औद्योगिक रूप से विकसित होने एवं भारत का एक औद्योगिक केन्द्र बनने के पश्चात् भी कोटा का सदियों पुराना हथकरघा उद्योग जिसे 'कोटा मसूरिया' उद्योग कहते हैं, साड़ियों के क्षेत्र में अपना विशिष्ट स्थान बनाए हुए है। कोटा साड़ी में प्रयुक्त मसूरिया धागा और उसकी चौकोर बुनाई इतनी आकर्षक है कि देश भर में कोटा साड़ी का नाम एवं मांग है।

काफी समय से कोटा का हथकरघा उद्योग मलमल, किरबी व महमूदी डोरिये के लिए प्रसिद्ध है। लगभग 80 वर्ष पूर्व मसूरिया धागे को प्रयुक्त कर वहां वर्गाकार बुनाई आरंभ हुई। साड़ियों की बुनाई में सूत, सिल्क एवं जरी के धागे का इस्तेमाल किया जाता है। कोटा की यह साड़ियां अनेक डिजाइनों में तैयार की जाती हैं। इन पर बंधेज, ज़री, कढ़ाई आदि भी की जाती है। बिना छपाई की साड़ियां जो सूती और ज़री के धागों से बनाई जाती हैं अधिक सुन्दर होती हैं। साड़ियां सादी तथा ज़री दोनों प्रकार की बनती हैं। कोटा की इन साड़ियों में अधिकतर मैसूर के रेशम का धागा मिलाया जाने के कारण इन साड़ियों को एवं हथकरघा द्वारा निर्मित अन्य वस्त्रों को "कोटा डोरिया मसूरिया" कहा जाता है।

कोटा जिले में हथकरघा उद्योग के दो प्रमुख केन्द्र हैं—कोटा के समीप कैथून ग्राम तथा दूसरा मांगरोल । इन स्थानों के अतिरिक्त यह उद्योग स्वयं कोटा, सांगोद, गेटोर, अटरू, मन्डाना आदि स्थानों में भी चल रहा है । राजस्थान के इस हस्त उद्योग द्वारा लगभग 25,000 से अधिक बुनकरों की आजीविका चल रही है । इस उद्योग की तथा इसके द्वारा अधिक व्यक्तियों को रोजगार दिलाने की अच्छी संभावनाएं हैं । सांगानेर एवं बाड़मेर में छपे हुए स्कार्फ एवं साड़ियां भी सारे देश में प्रसिद्ध हैं ।

चित्रकला की दृष्टि से भी राजस्थानी कलाकार प्रसिद्ध हैं । हाथ से चित्र बनाना राजस्थान की अति प्राचीन कला है । इन चित्रों का निर्यात मुख्यतः अमरीका, ब्रिटेन, पूर्वी एवं पश्चिमी जर्मनी और चेकोस्लोवाकिया को किया जाता है ।

राजस्थान में निर्मित मृदु पॉटरीज जगत प्रसिद्ध हो गयी है । इसका निर्यात मुख्यतः अमेरिका, हांगकांग, सिंगापुर, स्विट्जरलैंड, फिलिपाइन्स, आस्ट्रेलिया, इटली और ब्रिटेन आदि को किया जाता है ।

पीतल आदि धातुओं के कलात्मक कार्य के लिए भी राजस्थान प्रसिद्ध है । बड़े परिमाण में यहां पीतल आदि धातुओं में नक्काशी द्वारा कलात्मक वस्तुएं निर्मित की जाती हैं । इसका निर्यात अमेरिका, सोवियत रूस, कनाडा, डेनमार्क, पश्चिमी जर्मनी, नीदरलैंड, सऊदी अरब आदि देशों को हो रहा है ।

हाथी दांत पर नक्काशी तथा हाथी दांत की वस्तुओं के निर्माण के लिए जयपुर अब बहुत प्रसिद्ध हो गया है । हाथी दांत अन्य राज्यों से मंगाकर यहां के कुशल कारीगर बहुत कलात्मक वस्तुओं का निर्माण करते हैं जिनका निर्यात, अमेरिका, सोवियत रूस, चेकोस्लोवाकिया, जापान तथा केनिया आदि देशों को किया जाता है ।

लकड़ी पर कलात्मक तथा नक्काशीयुक्त कार्य के लिए भी राजस्थान प्रसिद्ध है । जोधपुर, उदयपुर आदि में लकड़ी की रंगीन, सजावटी वस्तुएं तथा खिलौने निर्मित किए जाते हैं । यह सामान मुख्यतः अमेरिका, जापान, ब्रिटेन, डेनमार्क, नीदरलैंड और हांगकांग आदि देशों को भेजा जा रहा है ।

रत्न-आभूषण के निर्माण के लिए भी राजस्थान प्रसिद्ध है । जयपुर तो इसके लिए विश्व प्रसिद्ध हो गया है । जयपुर रत्नों की विश्व की प्रमुख मंडियों में से एक है । यहां से रत्न बड़े परिमाण में निर्यात होते हैं । अकेले जयपुर में लगभग 30 हजार कारीगर रत्नों की घिसाई तथा कटाई-छंटाई में लगे हुए हैं । अनेक रत्न ऐसे हैं जिनका विदेशों से आयात किया जाता है और फिर उनको सुन्दर रूप देकर विदेशों को निर्यात किया जाता है । मानक की घिसाई तथा कटाई-छंटाई के लिए जयपुर बहुत प्रसिद्ध है । हीरों तथा मूंगों की भी यह बड़ी मन्डी है ।

सोने, प्लेटीनियम एवं चांदी के आभूषणों का निर्माण भी राजस्थान में कलात्मक ढंग से हो रहा है । इनका निर्यात अनेक देशों को होता है । सोने तथा चांदी के अतिरिक्त शरीर की सजावट के लिए अन्य धातुओं के आभूषणों का भी निर्माण राजस्थान में हो रहा है । इन आभूषणों का भी निर्यात होता है । राजस्थान की लाख से बनी चूड़ियां, कड़े तथा अन्य सजावटी सामान सारे देश में प्रसिद्ध हैं ।

संगमरमर की खुदाई तथा उसकी कटाई-छंटाई के लिए भी राजस्थान प्रसिद्ध है । मकराना का संगमरमर तो अपनी उच्च श्रेणी के लिए सारे देश में प्रसिद्ध है । भारत की अनेक विश्व प्रसिद्ध ऐतिहासिक इमारतों, मंदिरों तथा आवास-गृहों में राजस्थान के सुन्दर संगमरमर का उपयोग हुआ है एवं होता है । राजस्थान सफेद और लाल पत्थर की खानों के लिए भी सारे देश में प्रसिद्ध है । हजारों मजदूरों और कारीगरों को इस उद्योग से आजीविका मिली हुई है । हथकरघा एवं हस्त कला दोनों के लिए ही राजस्थान का देश में विशिष्ट स्थान है । □

688, बाबा खड़क सिंह मार्ग,
नई दिल्ली

कृषि उत्पादों के निर्यात की नई नीति ✳ [पृष्ठ 25 का शेषांश]

उत्पादन की स्थिति को देखते हुए नियमित आधार पर इनका स्तर होगा । निर्यात कुल उत्पादन का बहुत छोटा भाग होगा । इन सीमित स्तरों के अतिरिक्त, वास्तविक कुल उत्पादन के अनुसार प्रति वर्ष निर्यात के लिए अतिरिक्त मात्रा जारी करने के निर्णय लिए जा सकते हैं । इससे इन वस्तुओं के निर्यातक के रूप में साख जमेगी । विश्व बाजार में भारत की साख जमेगी ।

सरकार ने हाल ही में कृषि आधारित अन्य नई मदों, जैसे फूल, सब्जियां और साज-सज्जा के पौधों, के निर्यात का पता लगाने के लिए एक सर्वेक्षण करवाया था । एक तो हमारे यहां पर्याप्त मात्रा में हरी-भरी भूमि और धूप है जिसमें विभिन्न वातावरण वाले कई प्रकार के फूल और पौधे उगाने की क्षमता है । इनके उगाने में समय भी कम लगता है । सरकार ने इनके निर्यात को बढ़ावा देने के उद्देश्य से निर्यातकों और उत्पादकों के बीच निकट सम्पर्क कायम करने के लिए शृंखलाबद्ध उपायों की घोषणा की है । विमानों के महंगे भाड़े इनके निर्यात में आड़े आ सकते हैं लेकिन एयर इंडिया के सहयोग से इनके निर्यात के लिए रियायती दरें ली जाएंगी । आशा है कि इनके निर्यात में भी वृद्धि होगी ।

नई वस्तुओं के निर्यात करने का एक अन्य उदाहरण है कोकोआ । इसका भी निर्यात किया जा सकेगा । हमारे देश में लगभग 18,000 हेक्टेयर क्षेत्र में अनुमानतः 9,000 टन कोकोआ उत्पादन की क्षमता है । घरेलू जरूरतों को पूरा करने के बाद भी कोकोआ की निर्यात योग्य मात्रा उपलब्ध है । लेकिन कोकोआ की उत्पादन के बाद शोधन की सुविधाएं हमारे यहां नहीं हैं । इस आधारभूत कमी को दूर करने से इसका निर्यात संभव हो सकेगा ।

अंत में, यह बड़ी संतोषजनक बात है कि चालू वित्तीय वर्ष के प्रथम छह महीनों में कृषि आधारित उत्पादों के निर्यात में लगभग 30 प्रतिशत की वृद्धि हुई है । इसी से कृषि उत्पादों के निर्यात में वृद्धि की संभावनाएं स्पष्ट हो जाती हैं । □

काका की चौपाल में परिवार कल्याण की चर्चा

चरन सरन 'नाज'

आज काका की चौपाल में हमेशा से कुछ अधिक जमाव है। वे अपने तख्त पर मसनद के सहारे बैठे हुक्का गुड़गुड़ा रहे हैं। यों हर ओर चुप्पी है, लेकिन इधर-उधर काना-फूसी चल पड़ी है जिसे समझने का काका प्रयास करते हैं।

काका से नहीं रहा जाता वे पूछ बैठते हैं, "यह काना-फूसी क्यों ? आखिर बात क्या है ?"

काना-फूसी अब थोड़ी तेज हो जाती है, "तुम कहो—नहीं तुम कहो।" इससे आगे फिर भी कोई कुछ नहीं कहता।

"हां हां, कहो।" काका की शह पर आखिर जगधर वह सब कह देता है जिसे लोग संकोचवश नहीं कह पा रहे थे।

बात समझने के बाद काका ने पैंतरा बदला और बोले, "तो यह बात है—तुम्हें शिकायत है कि हमारे दीनू ने गांव वालों को फुसला कर सब की नसबन्दी करा दी—"

"हां, काका पूरा गांव बधिया हो गया।" नत्थू ने कहा।

काका को नत्थू की बात पर खांसी आ गई। पास रखी हुई पीकदान में कफ थूकते हुए उन्होंने कहा, "पहले यह बताओ कि तुम लोगों में से कितनों की नसबन्दी हो चुकी है ?"

काका के इस प्रश्न पर पूरी सभा कसमसा उठी और बहुतों ने क्रुद्ध होकर एक साथ चीख कर कहा, "हम काहे को नसबन्दी कराएं ?"

"बस बस, हम सब समझ गए।" काका ने कहा, "इस सवाल पर दो-चार जो चुप हैं केवल उन्हीं की नसबन्दी हुई है।" काका ने एक-एक कर के भी पन्द्रह-बीस लोगों से पूछा। सब का उत्तर "नहीं" था।

"नहीं काका", कई लोगों ने एक साथ कहा, "आप बेजा टाल-मटोल कर रहे हैं।"

"तो हम यह भी किए दे रहे हैं।" काका ने घुड़क कर कहा, "जिनकी नसबन्दी हुई है, वे एक ओर हो जाएं और जिनकी नहीं हुई वे दूसरी ओर।"

काका के इस सुझाव पर पूरी सभा दो गुटों में बंट गई। नसबन्दी वाले दस निकले और नसबन्दी न कराए हुए चालीस।

काका यह दृश्य देख कर ठहाका मार कर हंसे, "न सूत, न कपास, कोरी से लट्ठम-लट्ठा—भाई, ईमानदारी से कहो क्या तुम सब की शिकायत सही है ?"

सब को चुप देखकर काका कचहरी की भाषा बोलने लगे। "तुम्हारी शिकायत बेबुनियाद है, इसलिए मुकदमा खारिज़ समझो।"

"कैसे ?" जगधर ने कहा।

"तुम्हारी बात इस पहलू से भी गलत है कि तुम आठ-दस को पूरा गांव कहते हो।" काका ने कहा, "सच तो यह है कि पूरा गांव अभी नसबन्दी को बाकी है।"

"तो मतलब यह कि नसबन्दी कराना ठीक है ?" नत्थू और जोधा ने एक साथ पूछा।

"ठीक है या बेठीक", काका ने कहा, "यह कोई पूछे तो हम बताएं।"

कई लोगों ने एक साथ कहा, "हां, यही बताइए।" लेकिन दो-तीन अकड़बाजों को यह सुझाव पसन्द न आया और उन्होंने कहा, "नहीं काका, हम बस इतना ही कहने आए हैं कि दीनू को मना कर दें। हम ठीक-बेठीक नहीं सुनना चाहते।"

काका ने इन्हीं दो-तीन को सम्बोधित करते हुए कहा, "यह तुम्हारा भ्रम है। दीनू किसी पर दबाव नहीं डालता। समझाता जरूर है। मानना न मानना तुम्हारा काम है। फिर उसने यह काम गांव से नहीं अपनी ससुराल से शुरु किया है।"

काका की इस बात पर जगधर कुछ गरम हो गया, "यह पोल न खुलवाओ, काका। सबको मालूम है।"

"क्या मालूम है ?" काका ने भी उसी ताव से पूछा।

"यही कि दीनानाथ भैया बीवी-बच्चों को छोड़कर हमेशा ससुराल में घुसे रहते हैं।" जगधर ने आगे कहा, "जग्गू जैसा बावला साला पाकर, मजा काटते रहते हैं।"

"क्या बकते हो ?" काका को बुढ़ापे में भी जवानों का सा ताव आ गया।

"बकता नहीं", नत्थू ने कहा, "जगधर ठीक कहता है। दीनू चक्कर में फंसे हैं। सरहज नन्दोई में कुछ इशारे-बाजी हुई और दोनों ने तै करके जग्गू को बधिया करा दिया—न रहेगा बांस, न बजे बांसुरी——"

"यह सब बकवास है।" काका ने कहा, लेकिन सभा का रंग देखते हुए वे चुप हो गए और कुछ देर बाद बोले, "भाई जो तुम लोग कहो, वही ठीक है, लेकिन जो हम पूंछे वह भी बताओ।"

काका को नरम होते देख कर सब एक साथ बोल पड़े "जरूर, जरूर—पूछो काका, हम सब आप का सम्मान करते हैं।"

काका कुछ पूछने के बजाए भाषण पर उतर आए, "भाइयो, इसे तुम सब मान ही लोगे कि दुनिया कहां से कहां पहुंच गई और कहां से कहां जा रही है ? फिर भी तुम सब का ज्ञान पूरा नहीं। कारण यह है कि तुम सब पढ़े-लिखे नहीं हो। मैं अस्सी बरस का बूढ़ा हूं और दुनिया देख चुका हूं। उस समय का मिडिल तक पढ़ा हूं, जब मिडिल पास तहसीलदार और डिप्टी होते थे। क्या तुम सब यह नहीं मानते कि मैं अनुभव में तुम सबसे ज्यादा हूं ?"

"नहीं काका", सब एक साथ बोल उठे, "हम सब मानते हैं आप का ज्ञान और तजुर्बा हम सब से ज्यादा है। इसी से तो हर मामले में आप के पास दौड़े आते हैं।"

काका अब भी भाषण के मूड में हैं, "तो भाइयो, मुझे कहने दो। आदमी पैदा होता है, बढ़ता है, ब्याह करता है। बूढ़ी औरतें नई बहुओं को आशीर्वाद देती हैं--दूधों नहाओ, पूतों फलो--और नई सुहागिन पुरानी होकर पूतों के फलों से लद जाती हैं। यों ही परिवार बढ़ता है ना ?"

कुछ लोगों ने बीच-बीच हुंकारी भरी और काका बोलते गए, "जब हम पढ़ते थे, तो देश की आबादी कितनी थी ?--केवल तीस करोड़, और देश की लम्बाई-चौड़ाई आज के क्षेत्रफल से ड्यौढ़ी। आज का भारत सिमट कर छोटा हो गया है। बर्मा, बंगला देश, लंका और पाकिस्तान अलग-अलग देश बन गए हैं। आज इस सिकुड़े हुए भारत की आबादी सत्तर करोड़ के आस-पास है। मतलब यह कि हमारे बचपन के समय की जनसंख्या से आज की आबादी लगभग ढ़ाई गुना है। जानते हो इससे क्या हुआ ? नई उलझनें और समस्याएं पैदा हो गई। मैं पूछता हूं कि क्या जिस तरह आदमी बढ़े हैं, उसी तरह खेती-बाड़ी, घर-द्वार भी बढ़े हैं ?"

कुछ ने इस पर कहा, "जरूर बढ़े हैं।" और कुछ ने कहा, "जिसने मुंह दिया है वही कौर भी देता है।"

"नहीं देता", काका ने कहा, "कौर खुद जुटाना पड़ता है। अच्छा मैं जोधा से पूछता हूं--तुम्हारे बाबा कितने भाई थे ?"

"अकेले थे।" जोधा ने कहा, "और दस बीघा खेत पर राज करते थे। सुनते हैं, उनके समय में बुखारी सदा भरी रहती थी।"

"तुमने ठीक सुना है।" काका ने कहा, "उनके समय में ऐसी खुशहाली थी कि क्या कहना। खाने वाले कम अनाज बहुत--अगली पीढ़ी में एक घर के दो घर हुए और अब तीसरी पीढ़ी में जोधा पांच भाई हैं। कहने का मतलब यह है कि खेत पहले पांच-पांच बीघा बंटे, फिर जोधा और उनके भाइयों के खेत एक-एक बीघा हो गए। आंगन और कोठरियों का जो हाल हुआ कहने योग्य नहीं।"

काका की वार्ता से जोधा रोंआसा हो गया और काका ने नहले पर दहला मारा, "इससे कुछ सीख ली तुमने ? जिस प्रकार आदमी बढ़ते हैं, खेतीबाड़ी, घर-द्वार नहीं बढ़ते। आबादी के अधिक बढ़ने से रहने का ठिकाना तो जाता ही है, रोजी के साधन बंटते हैं, छीना-झपटी बढ़ती है।"

काका की बातों से जोधा बहुत प्रभावित हुआ। द्रवित होकर उसने पूछा, "काका, इसका उपाय ?"

"उपाय क्या ?" नत्थू ने कहा,

"होई है सोई जो राम रच राखा

को कर तरक बढ़ावै साखा।"

अब काका बोले, "कहते तो ठीक हो तुम, लेकिन दुनिया कर्म-भूमि भी कहलाती है। इसलिए उपाय करना ही चाहिए। बहुत समस्याएं उपाय करने से हल हो जाती हैं।"

"तो काका उपाय भी बताओ।" अब की बार जगधर ने पूछा।

"उपाय तो सरकार ने ही बता दिया है।" काका ने कहा, "परिवार कल्याण के कार्यक्रमों को अपनाओ। इससे जनसंख्या की बढ़ोतरी की रोकथाम होती है, रोजी के साधनों का बंटवारा ठीक से होता है और खाने-कमाने भर को सबको मिल जाता है।"

"जरा देसी भाषा में समझाओ काका।" जोधा ने कहा, "बात तो अच्छी लगी, मगर समझ में नहीं आई अभी।"

"तो इसे मिसाल से समझो। हम जोधा की ही मिसाल लेते हैं। भाइयों जोधा के यहां जोधा समेत चार प्राणी हैं--एक छोटा लड़का, एक छोटी लड़की और दो वे पति-पत्नी। घर में एक भैंस, दो गायें, एक जोड़ी बैल, और बस एक बीघा खेत रोजी के साधन हैं। इतने ही में उसे गुजर-बसर करनी है। वह दोनों फसल मिलाकर चालीस-पैंतालीस मन अनाज पैदा करता है। जरूरत से कुछ अधिक ही साग-सब्जी उगा लेता है और जानवरों के खाने के लिए दाना-भूसा भी पा जाता है। भैंस और गायों से लगभग सोलह-बीस सेर दूध भी पा जाता है। अगर जोधा कायदे से चले तो निर्वाह अच्छे ढंग से हो सकता है। ठीक है न जोधा ?" सभा की ओर से दृष्टि हटा कर काका ने जोधा से ही प्रश्न किया।

"ठीक तो है।" जोधा ने कहा, "मगर घर में कुछ न कुछ लगा ही रहता है।"

"इसका कारण है तुम योजना बनाकर घर नहीं चलाते।" काका ने जोधा से ही अब कहना शुरु किया, "अच्छा सुनो, अब की बरस पीढ़ी दर पीढ़ी के कर्जे भी माफ हो गए हैं और अब किसानों को बैंक की सुविधाएं भी मिलने लगी हैं। अब जैसे मैं बताऊं, वैसे चलो।"

"बताओ काका बताओ जोधा को उपाय।" सबने एक साथ कहा "हम भी वैसे ही करेंगे।"

अब काका जोधा को घर के नियोजन की विधि बताने लगे, "तुम चार हो, चार के डेढ़ सेर रोजाना अनाज बहुत नहीं तो काफी है। इस हिसाब से पूरे वर्ष में सदा तेरा मन से अधिक का खर्च नहीं। पांच मन आकस्मिक खर्च के लिए भी रख लो। बीस मन के आस-पास आसानी से बेच सकते हो। आधा भूसा भी बेच सकते हो। खेत की इस आमदनी को अपनी बचत समझो। अपनी जरूरत से बढ़े हुए घी-दूध को भी बेच दो। इस आमदनी से घर का ऊपरी खर्च चलाओ। यही घर का नियोजन है।"

सबने एक साथ कहा, "काका, यही परिवार नियोजन है, तो अब हम यही करेंगे।"

काका हंसे, "यह घर का नियोजन है, परिवार का नहीं--घर का नियोजन घर के मौजूद लोगों के लिए होता है--परिवार के नियोजन में आगे भी देखना होता है।"

"कैसे ?" सभी ने आश्चर्य से पूछा।

इस प्रश्न के उत्तर में काका ने सभा वालों को नसबन्दी, लूप और निरोध की उपयोगिता के बारे में समझाया और उन लोगों की इस शंका को निराधार बताया कि इन विधियों को अपनाने से मनुष्य स्त्री-के योग्य नहीं रहता। दूसरे इस शंका का समाधान उनकी गवाहियों से हो गया जिन की नसबन्दी हो चुकी थी।

एक औरत जिसके पति ने नसबन्दी कराई थी उधर से गुजरते हुए वहां की कार्यवाही देखने लगी थी। उसने भी कहा, "हमारे वह तो नसबन्दी के बाद अच्छे चंगे साठा-पाठा हो गए हैं।"

सारांश यह है कि सबके सब नसबन्दी या परिवार कल्याण के हेतु सन्तान की पैदाइश की रोक-थाम के अन्य साधनों को अपनाने को तैयार हो गए और सभा विसर्जित हो गई। □

केन्द्र के समाचार

राष्ट्रीय परिवार कल्याण मास

सारे देश में फरवरी 1982 को परिवार कल्याण मास के रूप में मनाया गया। प्रधानमंत्री, श्रीमती इंदिरा गांधी ने इस अवसर पर भेजे अपने संदेश में कहा कि अपने देश की प्रगति के लिए यह बहुत महत्वपूर्ण है कि जनसंख्या की वृद्धि दर को रोका जाए। परिवार नियोजन जनता के कल्याण के लिए अनिवार्य है तथा महिलाओं और बच्चों के जीवन-स्तर में सुधार लाने हेतु और भी आवश्यक है लेकिन यह जनता का आन्दोलन होना चाहिए जो उनके स्वतंत्र विचार पर आधारित हो। यह स्वैच्छिक है लेकिन यह उत्साहवर्द्धक भी होना चाहिए। हमारे नए बीस सूत्री कार्यक्रम में स्वैच्छिक परिवार नियोजन को ठीक ही एक मुख्य सूत्र के रूप में शामिल किया गया है। यदि जनता अपने बच्चों तथा अपने देश से प्रेम करती है तो विवाहित दम्पत्तियों को परिवार नियोजन अवश्य अपनाना चाहिए।

पेय जल दशक

भारत अंतर्राष्ट्रीय पेय जल पूर्ति तथा सफाई दशक के अंतर्गत लक्ष्यों को प्राप्त करने में कोई कसर उठा नहीं रखेगा। इस दशक का उद्देश्य 1990 तक शत-प्रतिशत जनसंख्या को पीने का पानी उपलब्ध कराना है। आवास और निर्माण सचिव श्री एम० के० मुखर्जी ने यह बात 3 फरवरी 1982 को नई दिल्ली में आयोजित राज्यों के सचिवों, मुख्य अभियंताओं तथा अंतर्राष्ट्रीय दशक की कार्यान्वयन संस्थाओं के सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए कही। उन्होंने कहा कि लोगों की इस आधारभूत आवश्यकता को तात्कालिकता के आधार पर पूरा करने की दृष्टि से राष्ट्रीय प्राथमिकता के रूप में इसे 20 सूत्री आर्थिक कार्यक्रम में शामिल किया गया है। उन्होंने आशा व्यक्त की कि इन लक्ष्यों को प्राप्त करने में धन की कठिनाई को आड़े नहीं आने दिया जाएगा। इस समस्या का हल जहां कहीं भी सम्भव होगा कम लागत का तरीका विकसित करके किया जाएगा।

ग्रामीण विद्युतीकरण

ग्रामीण विद्युतीकरण निगम ने 16 राज्यों में 75 नई विद्युतीकरण परियोजनाओं के लिए 30 करोड़ रु० की और ऋण-सहायता की स्वीकृति दी है। ये राज्य हैं: आन्ध्र प्रदेश, असम, बिहार, हिमाचल प्रदेश, कर्नाटक, केरल, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, पंजाब, राजस्थान, सिक्किम, तमिलनाडु, त्रिपुरा, उत्तर प्रदेश तथा पश्चिम बंगाल। इन नई परियोजनाओं से 500 से अधिक विद्युतीकृत गांवों में अधिक बिजली उपलब्ध कराने के अलावा 2700 से अधिक गांवों तथा 200 पिछड़ी बस्तियों में बिजली पहुंचाने में सहायता मिलेगी। परियोजना क्षेत्र में 14,000 से अधिक सिंचाई पम्प सेटों को चालू किया जाएगा।

इन नई स्वीकृतियों की एक विशेष बात यह है कि 25 करोड़ रु० की ऋण सहायता की 45 परियोजनाएं पिछड़े क्षेत्रों के विकास के लिए बनाई गई हैं। इनमें संशोधित न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के अंतर्गत आने वाली 17 करोड़ रु० ऋण सहायता की 25 परियोजनाएं भी शामिल हैं।

कृषि उत्पादन को बढ़ाने के उद्देश्य से, विशेष परियोजना कृषि कार्यक्रम के अंतर्गत लगभग 8 करोड़ रु० ऋण सहायता की 22 परियोजनाएं स्वीकृत की गई हैं। इन परियोजनाओं पर ग्रामीण विद्युतीकरण निगम, ए० आर० डी० सी० तथा वाणिज्यिक बैंकों द्वारा संयुक्त रूप से पूंजी लगाई जाएगी। लगभग 9,600 सिंचाई पम्प सेटों को चालू किया जाएगा। इन परियोजनाओं के लिए निगम 2.6 करोड़ रु० की वित्तीय सहायता देगा।

कुष्ठ रोग की रोकथाम

छठी योजना में कुष्ठ रोग के प्रारम्भिक चरण में ही रोगियों का पता लगाने और उनका नियमित इलाज करने के साथ-साथ स्वास्थ्य शिक्षा प्रशिक्षण एवं मार्गदर्शन सेवाएं सुलभ कराने की परिकल्पना की गई है।

कुष्ठ रोगियों के उपचार के लिए उठाए गए कदमों का उल्लेख करते हुए मंत्री महोदया ने कहा कि रोगियों की अनुमानित संख्या 30 से 40 लाख के लगभग है। इनमें से 25 लाख रोगी इलाज करवा रहे हैं। विभिन्न योजना अवधियों के दौरान देश में बहुत सी कुष्ठ नियंत्रण इकाइयां, सर्वेक्षण, शिक्षा और उपचार केन्द्र, शहरी कुष्ठ केन्द्र और कुष्ठ अस्पताल खोले जा चुके हैं। एक अप्रैल, 1981 से इस कार्यक्रम को शत-प्रतिशत केन्द्रीय सहायता प्राप्त कार्यक्रम बना दिया गया है जिसके फलस्वरूप इसका कार्यान्वियन और अधिक प्रभावी ढंग से हो रहा है। साथ ही, स्वैच्छिक और सरकारी, दोनों क्षेत्रों में रोगियों को डी०डी०एस० मुफ्त सप्लाई की जा रही है।

बीस सूत्री कार्यक्रम के अधीन आवास

बीस सूत्री कार्यक्रम का नवां सूत्र उन ग्रामीण परिवारों को जिनके पास कोई जगह नहीं है, उन्हें आवास के लिए जमीन आबंटित करने और निर्माण सहायता देने के बारे में है। 10वें सूत्र का उद्देश्य गंदी बस्तियों का पर्यावरण सुधारने, आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों के लिए आवास निर्माण कार्यक्रम के कार्यान्वयन तथा भूमि के बढ़ते मूल्यों को रोकने के लिए

कदम उठाना है। परिषद् इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए कार्यक्रम तैयार करेगी ताकि राज्य सरकारें इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए ठोस प्रयास कर सकें। वर्तमान योजना में गन्दी बस्तियों में रहने वाले एक करोड़ लोगों को आधारभूत सुविधाएं देने तथा आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग के 1.62 करोड़ लोगों के लिए आवासीय भूमि के विकास करने की व्यवस्था की गई है।

ग्रामीण छात्रों के लिए इलेक्ट्रानिक्स पाठ्यक्रम

इलैक्ट्रानिक्स एवं दूरसंचार इंजीनियर्स संस्थान (आई०ई०टी०ई०) ने ग्रामीण और दूरदराज के क्षेत्रों के छात्रों की आवश्यकताएं पूरी करने के लिए एक पायलट परियोजना के रूप में पत्राचार पाठ्यक्रम शुरु किया है। इसके अंतर्गत ग्रेड आई०ई०टी०ई० प्रमाणपत्र प्रदान किए जाएंगे जो कि देश की उच्च सेवाओं में प्रवेश के लिए आवश्यक इंजीनियरिंग डिग्री के बराबर होंगे और यह प्रमाण-पत्र संघ लोक सेवा आयोग से मान्यता प्राप्त है। यह पाठ्यक्रम विशेषरूप से ग्रामीण क्षेत्रों के उन विद्यार्थियों की आवश्यकताएं पूरी करने के लिए तैयार किया गया है जिन्हें पुस्तकालयों की सुविधाएं उपलब्ध नहीं हैं और जिन्हें नियमित पाठ्यक्रमों में भाग लेने का अवसर नहीं मिलता।

सिंचाई सुविधाएं

भारत सरकार ने वर्ष 2000 तक समस्त 11.3 करोड़ हैक्टेयर भूमि के लिए सिंचाई सुविधाएं उपलब्ध कराने का लक्ष्य निर्धारित किया है।

छठी पंचवर्षीय योजना के पहले दो वर्षों में 50 लाख हेक्टेयर भूमि की सिंचाई क्षमता पैदा की गई है। इस कार्य में और अधिक तेजी लाने का भी प्रस्ताव है ताकि योजना के शेष 3 वर्षों के दौरान प्रति वर्ष 30 लाख हेक्टेयर भूमि की अतिरिक्त सिंचाई क्षमता पैदा की जा सके। इस प्रकार हम योजना में निर्धारित 1 करोड़ 40 लाख हेक्टेयर भूमि की अतिरिक्त सिंचाई क्षमता पैदा करने में सक्षम हो सकेंगे। □

छोटा-सा परिवार

छोटा सा परिवार हमारा सुख का है आधार
खिलती हैं सुख की मुसकानें छोटा हो घर बार।
नहीं लड़ाई रोटी की है
नहीं जरा भी कठिनाई है
बस आगे बढ़ने की चिंता
मेहनत ही सच्चाई है
दिया जला नूतन जीवन में आयी नई बहार
खिलती हैं सुख की मुसकानें छोटा हो घर बार।
लहलहाते हैं खेत मौज में
धरती उगले सोना
उगे नया आशा का सूरज
अब कैसा दुख ढोना
अब सुख बढ़ता ही जाता है प्राणी हैं हम चार
खिलती हैं सुख की मुसकानें छोटा हो घर बार।
अच्छा पहना अच्छा खाया
अच्छी शिक्षा पाई है
मजा आ गया जीने का अब
नई नीति अपनाई है
चलो बनायें स्वर्ग धरा को मिलकर सारे ही परिवार
खिलती हैं सुख की मुसकानें छोटा हो घर बार।

पूरन सरमा
सिकन्दरा-303326
(जयपुर–राजस्थान)

गुजरात में ग्राम अंगीकरण कार्यक्रम

✳

एच० एस० नागराज शर्मा

गुजरात राज्य में सौ से अधिक निजी फर्मों और संस्थानों ने राज्य के गांवों के 10 प्रतिशत गांवों में ग्राम सुधार कार्यक्रमों को शुरू करने में पहल की है।

निजी संगठनों का ध्यान ग्रामीण विकास योजनाओं की ओर आकृष्ट किया गया है क्योंकि इनको आयकर अधिनियम 1961 की धारा 35 सी सी और 35 सीसी ( ) के अन्तर्गत ग्रामीण विकास कार्यक्रमों पर खर्च की गई राशि पर आयकर में छूट दी जाती है। इस तरह निजी संगठनों को ग्राम सुधार पर खर्च की गई राशि पर कर अदायगी से छूट मिल जाती है। एक सौ एक सार्वजनिक न्यास या समितियां, 12 कम्पनियां और चार सहकारी समितियां गुजरात के गांवों को अपनाकर विकसित करने के लिए आगे आई हैं। इस क्षेत्र में आठ संस्थान बिना कर छूट लिए ही कार्य कर रहे हैं। तीन से पांच वर्षों के दौरान इस कार्यक्रम पर 35 करोड़ रुपये व्यय होने की संभावना है। ये संस्थान वर्ष 1980 के अन्त तक 7.5 करोड़ रुपये व्यय कर चुके हैं।

कई राष्ट्रीयकृत बैंकों, भारतीय कृषक उर्वरक सहकारी लि० (इफको) और गुजरात के राष्ट्रीय वस्त्र निगम भी राज्य में काफी गांवों को अपना रहे हैं। राज्य के दो पिछड़े जिलों कच्छ और पंचमहल के लगभग 600 गांवों को अपनाने के लिए बम्बई स्थित संगठन आगे आए हैं।

अंगीकरण प्रयोग के प्रभाव को जानने के लिए हमें कुछ अपनाए गए गांवों पर दृष्टिपात करना होगा। आइये हम अहमदाबाद जिले के डासक्राई तालुका में चलें। इस तालुके में विमला ग्राम सेवा समाज-न्यास ने 9 गावों में ग्रामीण विकास की गतिविधियां शुरू कर रखी हैं। इन गांवों में बहुत निर्धन लगभग 2,000 परिवारों को इससे लाभ हो रहा है। इस न्यास की प्रमुख परियोजनाओं में एक गोबर गैस संयंत्र है जिससे लगभग सौ परिवारों को मिट्टी के तेल की लागत से भी कम लागत पर गैस उपलब्ध कराई जाती है। पंजाब नेशनल बैंक गांव की परियोजनाओं के लिए आवश्यक धन प्रदान कर रहा है। न्यास दुधारू पशु रखने वाले लाभान्वित परिवारों के लिए कम लागत के पशु आहार के उत्पादन में भी लगा हुआ है।

राष्ट्रीय वस्त्र निगम (गुजरात) ने अहमदाबाद के समीप धोल्का तालुका के बदरखा गांव को अपनाया है। इस गांव की जनसंख्या काफी है और इसमें बुनकर रहते हैं जिनको अनुसूचित जाति माना गया है। यह निगम इस गांव के बुनकरों को उचित मूल्य पर धागा उपलब्ध कराने और उनके द्वारा तैयार वस्त्रों को बाजार में बेचने की व्यवस्था करता है। उनकी आमदनी को बढ़ाने के लिए निगम ने इन बुनकरों को पोलिएस्टर धागा उपलब्ध कराने की भी व्यवस्था की है। राष्ट्रीय वस्त्र निगम अहमदाबाद बिजली करघों को चलाने के लिए युवकों को प्रशिक्षित करने का भी प्रबन्ध करता है। महिलाओं को तकिये के लिहाफ, रजाई, और बच्चों के कपड़ों की सिलाई करने का प्रशिक्षण दिया जाता है। गांव में चर्म श्रमिकों को क्रोम-लेस चमड़ा तैयार करने का प्रशिक्षण दिया जाता है।

इफको के क्रियाकलाप

भारतीय कृषक उर्वरक सहकारी लि० (इफको) ने गुजरात के 11 जिलों के 21 गांवों के विकास का कार्य अपने हाथ में लिया है। प्रत्येक गांव में कृषि उत्पादन में सुधार लाने पर इसने मुख्य रूप से बल दिया है। इफकों के क्षेत्र अधिकारी अपनाए गए गांवों में अन्य आर्थिक गतिविधियों के संवर्धन पर भी ध्यान देते हैं।

इफको ने सूरत जिले के मामूली से जनसंख्या वाले छोटे से गांव डूंगर चिखली की कुल 190 हेक्टेयर भूमि में से 145 हेक्टेयर भूमि को उपजाऊ बना दिया है। इस गांव की कुल जनसंख्या केवल 638 है। इस गांव में प्रौढ़ शिक्षा की कक्षाएं और और वृक्ष लगाने जैसी सामाजिक आर्थिक गतिविधियों को बढ़ावा देने के फलस्वरूप अब वहां पर किसानों के खेतों में 235 फलदार वृक्ष और सड़कों के दोनों ओर 129 वृक्ष लगाए जा चुके हैं।

कुल मिलाकर राज्य में 15,800 किसानों को भूमि सुधार, उर्वरकों के प्रयोग, विकसित बीजों, पौध संरक्षण, ट्रैक्टर खरीदने और खेती के आधुनिक तौर-तरीके का प्रशिक्षण लेने के लिए सहायता दी जाती है। लगभग 4500 ग्रामीण निर्धनों को दूधारू पशु दिलवाए गए हैं। लगभग 13,000 पशुओं की, कृत्रिम गर्भाधान सहित, स्वास्थ्य देखभाल की गई। लगभग 14,000 एकड़ भूमि को सिंचाई कार्यक्रम के अन्तर्गत लाया जा चुका है। लगभग 1,100 ग्रामीण कारीगरों को बैंक ऋण और लगभग 2850 व्यक्तियों को विभिन्न काम-धंधों और कुटीर उद्योगों का प्रशिक्षण दिया गया।

ये संगठन और उनके कार्यकर्ता सरकारी तंत्र के साथ कदम से कदम मिलाकर एक दल के सदस्यों के रूप में कार्य करते हैं। गुजरात में ये कार्यक्रम तालुक और जिला पंचायतों के अधिकारियों के समन्वय से ही कार्यान्वित किए जाते हैं। ▭

[illegible] 350 [illegible] उत्पादन [illegible] आशा है।